ओ३म्

आर्य जगत

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 30 अप्रैल 2017

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र

सप्ताह रविवार, 30 अप्रैल 2017 से 06 मई 2017

वैशाख शु. – 05 ● वि० सं०–2074 ● वर्ष 58, अंक 68, प्रत्येक मगंलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 193 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,117 ● पृ.सं. 1–12 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

डी.ए.वी. पटियाला में मनाया गया आर्य समाज स्थापना दिवस

'आर्य युवा समाज' डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल भूपिन्द्रा रोड पटियाला द्वारा बड़ी श्रद्धा के साथ 'आर्य समाज स्थापना दिवस' एवं 'नव विक्रमी संवत्–2074' मनाया गया। आयोजन का शुभारंभ वैदिक मंत्रोच्चारण के साथ यज्ञ से किया गया; जिसमें प्राचार्य व शिक्षकवृन्द ने विश्व कल्याण की कामना करते हुए यज्ञाग्नि में आहुतियाँ प्रदान कीं। आर्य समाज के नियमों की व्याख्या करते हुए अपने सम्बोधन में प्राचार्य ने कहा, 'आर्य समाज कोई सम्प्रदाय नहीं बल्कि एक सामाजिक आन्दोलन है। जिसकी स्थापना युग पुरुष, महान समाज सुधारक, शिक्षाविद् व क्रांतिकारी 'महर्षि दयानंद सरस्वती' ने तत्कालीन समाज में फैली

हुई 'बाल–विवाह', 'अशिक्षा', पाखंड' व 'अंधविश्वास' आदि कुरीतियों को दूर करके एक स्वच्छ समाज की स्थापना के उद्देश्य से 1875 में की थी। '' उन्होंने भारतीय संस्कृति की महत्ता बताई। इस अवसर पर श्रीमती सरोज प्रभाकर ने विशिष्ट अतिथि के रूप में अपना शुभ आशीर्वाद दिया।

संगीत अध्यापिका श्रीमती राजनीत कौर द्वारा सभी के साथ मिलकर भक्तिपूर्वक गाये 'ओ३म् ओ३म् बोल मनवा, ओ३म् ओ३म् बोल..............।' भजन से सारा वातावरण 'ओ३म्मय' बन गया तथा 'ओ मेरा प्यारा आर्य समाज' भजन के द्वारा आर्य समाज का गुणगान किया गया। भक्तिभाव पूर्वक लगाए गए वैदिक जयघोषों 'वैदिक धर्म की जय', 'वेद की ज्योति जलती रहे', आर्य समाज अमर रहे', 'प्रज्ञा चक्षु गुरु विरजानंद जी की जय' व 'महर्षि देव दयानन्द जी की जय' से सारा वातावरण गूँज उठा।

शांति–पाठ व परमपिता परमेश्वर के आशीर्वाद स्वरूप प्रसाद वितरण के साथ कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

डी.ए.वी. यमुनानगर का नया सत्र 21 कुण्डीय यज्ञ से प्रारम्भ हुआ

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, प्रोफेसर कालोनी यमुनानगर में नव सत्र के प्रारम्भ होने की पूर्व संध्या पर 21 कुण्डीय यज्ञ का आयोजन किया गया। स्थानीय विधायक श्री धनश्याम अरोड़ा जी ने मुख्य अतिथि के रूप में शिरकत की। उनके साथ भाजपा के महासचिव श्री राजेश कुमार सपरा भी उपस्थित थे। कार्यक्रम की अध्यक्षता स्वामी सच्चिदानंद जी महाराज ने की तथा यज्ञ का संचालन एवम् प्रतिपादन विद्यालय के धर्म शिक्षक श्री नरेश कुमार द्वारा किया गया।

अपने स्वागत अभिभाषण में विद्यालय के चेयरमैन श्री विजय कपूर ने कहा कि श्री धनश्याम जी का जीवन बहुत ही सरल

एवम् सामान्य है। अपने कर्त्तव्य का निर्वाह करने के लिए ये हमेशा तत्पर रहते हैं। उन्होंने विद्यार्थियों को उनके जीवन मूल्यों को ग्रहण करके अपने जीवन को यज्ञमय बनाने का सुझाव दिया। मुख्य अतिथि श्री धनश्याम ने कहा कि भारतीय संस्कृति जीवन मूल्यों के लिए इतनी विख्यात रही है कि विश्वभर से तक्षशिला और नालन्दा विश्वविद्यालयों में विश्व के लोग शिक्षा ग्रहण करने आते थे। विद्यालय की दिनचर्या से प्रभावित होकर मुख्य अतिथि ने कहा कि यह विद्यालय विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास में एक अहम् भूमिका निभा रहा है तथा विद्यार्थियों में इस उम्र में वैदिक संस्कृति पर आधारित मूल्यों का प्रशिक्षण देते हुए एक सुदृढ़ समाज एवम् राष्ट्र निर्माण करने में योगदान दे रहा है।

विद्यालय के प्रधानाचार्य ने मुख्य अतिथि एवम् सभी अतिथियों का अभिनंदन करते हुए कहा कि श्री धनश्याम दास अरोड़ा समय–समय पर विद्यालय में आकर अपने आशीर्वचनों से तथा सहयोग से अनुगृहीत करते हैं। साथ ही, प्रधानाचार्य जी ने मुख्य अतिथि को विद्यालय के विकास हेतु 2 लाख की अनुदान राशि प्रदान करने के लिए धन्यवाद किया। अन्त में, सभी अतिथियों के प्रति आभार व्यक्त करते हुए नये सत्र के सुचारु एवम् सफल रूप से सम्पन्न होने की कामना की।

एम. एल. खन्ना डी.ए.वी. द्वारका में 11 कुण्डीय यज्ञ का आयोजन

एम.एल. खन्ना डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल एवं आर्य युवा समाज द्वारका के तत्वावधान में नवसंवत्सर 2074 के पावन अवसर पर 11 कुण्डीय यज्ञ का आयोजन सर्वजनहिताय सर्वजनसुखाय के उद्देश्य से किया गया। साथ ही छात्रों को हिंदी कैलेंडर के अनुसार नववर्ष का ज्ञान कराना भी इस उद्देश्य में सम्मिलित था।

इस यज्ञ में ऋतु अनुकूल हवन सामग्री का प्रयोग भरपूर मात्रा में किया गया। 11 कुण्डीय यज्ञ के इस भव्य आयोजन में विद्यालय के छात्र–छात्राओं तथा अध्यापक–अध्यापिकाओं ने एवं अभिभावकों ने भी विशिष्ट वेद मन्त्रों से आहुतियाँ डालकर धर्म लाभ उठाया। इस यज्ञ के ब्रह्मा वैदिक प्रवक्ता एवं

शेष पृष्ठ 011 पर ☞

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. ९

संपादक – पूनम सूरी

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह – रविवार, 30 अप्रैल 2017 से 06 मई 2017

वन्दे मातरम्

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

शिला भूमिरश्मा पांसुः, सा भूमिः संधृता धृता।

तस्यै हिरण्यवक्षसे, पृथिव्या अकरं नमः।। अथर्व

ऋषिः अथर्वा। देवता भूमिः। छन्दः अनुष्टुप्।

● **(शिला)** शिला, **(अश्मा)** पत्थर, **(पांसुः)** धुलि [ही] (भूमिः) भूमि [है]। **(सा भूमिः)** वह भूमि **(संधृता)** सम्यक् प्रकार धारण की जाकर **(धृता)** [राष्ट्र के रूप में] धृत हो जाती है। (तस्यै) उस **(हिरण्यवक्षसे)** हिरण्यवक्षा, सुवर्णगर्भा **(पृथिव्यै)** भूमि के लिए **(नमः अकरं)** नमस्कार करता हूँ।

● जिस राष्ट्र–भूमि पर हम अपना तन–मन धन बलिदान करने को तैयार रहते हैं, जिसके गौरव–गीत गाते हम नहीं थकते, जिसकी निन्दा सुन हमारा चेहरा तमतमा उठता है, और जिसकी प्रशंसा सुन हम आनन्द–विभोर हो जाते हैं, उसका विश्लेषण करके देखें तो वह शिला, पत्थर, धूलि आदि का निर्जीव समूह मात्र है। वह क्या वस्तु है जो उस निर्जीव पृथिवी को सजीव राष्ट्र के रूप में परिणत कर देती है? वह वस्तु है उसके निवासियों का परस्पर संगठित होकर, सबको एक इकाई मानकर, अपने अभ्युदय के लिए उसे संधृत करना। संधृत करने में भूमि के वन, पर्वत, खेत, बाग–बगीचे, मैदान, खनिज की खानें, नदियाँ, समुद्र, सबको सजाना–सँवारना, अधिकाधिक उपयोगी बनाना, उद्योग–धधों, कल–कारखानों आदि को प्रतिष्ठित एवं विकसित करके उत्पादन बढ़ाना, प्रजा की शिक्षा–दीक्षा, चिकित्सा, सामाजिक उन्नति आदि की व्यवस्था करना सब सम्मिलित है। ऐसा करने पर वह शिला, पत्थर, धूल–मिट्टी का ढेर मात्र निष्प्राण पृथिवी सप्राण राष्ट्र–भूमि के रूप में आदृत होने लगती है। तब उसके सम्मान को हम अपना सम्मान और उसके अपमान को अपने समझने लगते हैं। उसकी एक–एक इंच भूमि की रक्षा को, उसकी चतुर्मुखीन उन्नति को, उसकी कीर्ति–प्रतिष्ठा को अन्य राष्ट्रों में उसे उच्च स्थान दिलाने को हम अपना कर्तव्य समझते हैं।

भूमि 'हिरण्यवक्षाः' तो पहले से ही है क्योंकि उसके गर्भ में कहीं सुवर्ण–रजत की खानें भरी हैं, कहीं हीरे मोती, रत्न, मणियाँ बिछी हैं, कहीं मूल्यवान् तैल–कूप भरे हैं, कहीं अन्य विविध खनिज द्रव्य विद्यमान हैं। किन्तु अब राष्ट्र–भूमि का रूप धारण करने के पश्चात् तो वह सच्चे अर्थों में हमारे लिए 'हिरण्यवक्षाः' हो गई है, क्योंकि हमारे राष्ट्र द्वारा 'कहाँ कौन–सी सम्पत्ति भू–गर्भ में छिपी पड़ी है' इसका अनुसंधान करके राष्ट्रियस्तर पर उसमें से हिरण्यादि सम्पत्ति को प्रजा के हितार्थ निकाला जाने लगा है।

हे अपने वक्षः स्थलपर हिरण्य–हार से अलंकृत मणिमुक्तारत्नापलंकारधारिणी, सुजला ,सुफला, मलयज–शीतला, सदस्य–श्यामला, गौरव–मंडिता, यशस्विनी, मनोमोहिनी, समृद्धिमयी मातृभूमि! तुझे हमारा नमस्कार है, शतशः नमस्कार है। ❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

आनन्द गायत्री कथा

● **महात्मा आनन्द स्वामी**

पिछले अंक में महात्मा जी ने गायत्री की महिमा बखान करते हुए अपने जीवन में गायत्री से आए परिवर्तन का जिक्र किया। महात्मा हंसराज के नेतृत्व में समाज–सेवा तथा राहत–कार्यों का वर्णन करते हुए मोपला–विद्रोह जैसे हादसों के समय पत्रकारों के मौन पर कटाक्ष करते हुए कहा कि हिन्दू–मुस्लिम एकता आवश्यक है किन्तु यह एकता तब हो सकती है, जब हिन्दू भी इतने संगठित हों, जितने कि मुसलमान हैं।

——अब आगे

इस विचार को हृदय में रखकर मैंने 'मिलाप' पत्र (अखबार) का प्रकाशन प्रारम्भ किया, इसलिए कि देश में मिलाप की, हिन्दू–मुस्लिम एकता की, हिन्दू–हिन्दू–मिलाप की, आचरण को उन्नत करने की, सदाचार को प्रोत्साहन देने की, सत्य–रक्षा की और मानवता की रक्षा की आकांक्षा उत्पन्न की जाए। यह आदर्श लेकर 'मिलाप' जब निकाला तो कई लोगों ने कहा कि इस अकेले व्यक्ति से क्या पत्र (अखबार) चलेगा! एक–दो सप्ताह की बात है, फिर बन्द हो जाएगा। परन्तु एक–दो सप्ताह तो नहीं, 'मिलाप' को चलते पूरा एक वर्ष हो गया, तो कुछ लोगों ने कहना आरम्भ किया कि कहीं से रुपया ले लिया होगा, तभी तो पत्र (अखबार) चलता है। परन्तु यह बात तो ठीक नहीं थी। कभी किसी से कोई रुपया मैंने लिया नहीं। 'मिलाप' यदि चलता था तो किसी के रुपये से नहीं, प्रत्युत ईश्वर की कृपा से। 'मिलाप' सफल हुआ तो इसके बाद 'हिन्दी मिलाप' भी निकला। लोगों ने कहा, 'अब इसका अन्त आ गया है।' किन्तु अन्त आया नहीं। 'हिन्दी मिलाप' में लगभग एक लाख रुपया घाटा डाला गया। इतना होते हुए भी चलता रहा। अब भी चलता है। तब भगवान् की कृपा होने लगी। ताँगें, मोटर–गाड़ियाँ, गाय, भैंस, सभी–कुछ आ गया। बेटे हुए, बेटियाँ भी, धन–दौलत, लाखों की सम्पत्ति– यह सब–कुछ मिला, क्योंकि गायत्री माँ ने कहा है कि मैं सब–कुछ देती हूँ– धन–दौलत, बल, कीर्ति, सब–कुछ। माँ की कृपा से यह सब–कुछ मिला। उन्हीं दिनों लाहौर के अन्दर यूनीवर्सिटी–हॉल में पंजाब के गवर्नर पर गोली चली। चार युवक पकड़े गए। उन पर गवर्नर की हत्या करने की साज़िश का अभियोग चला। रणवीर भी उनमें से एक था। सैशन जज ने फाँसी के दण्ड की आज्ञा सुना दी। तभी एक और दुर्घटना हुई। मैं राजेन्द्रनगर आर्यसमाज के उत्सव पर गया हुआ था। एक पत्थर से पाँव रपट गया। मैं पहाड़ से नीचे जा गिरा। रीढ़ की हड्डी टूट गई। घायल होकर मैं लाहौर पहुँचा। सारा धड़ प्लास्टर से जकड़ दिया गया। एक तख्त पर मुझे लिटा दिया गया। हिलना निषिद्ध था। हिला जाता भी न था। लोग रणवीर को फाँसी की आज्ञा होने के कारण मेरे पास सहानुभूति–प्रदर्शन के लिए आने लगे। सीढ़ियों पर चढ़ते समय वे रोनी–सी सूरत बना लेते, वाणी को भारी कर लेते, आँखों में आँसू ले आते, किन्तु जब वे मेरे पास आते तो मैं उन्हें हँसता हुआ मिलता। वे मुझे मुस्कराता हुआ देखते तो आश्चर्य से कहते– 'तेरी छाती में हृदय है या पत्थर? बेटे को फाँसी की आज्ञा हो गई है, स्वयं तख्त पर पड़ा है, फिर भी हँसता है?' तो मैं विश्वास के साथ कहता– 'सुनिए! यदि मेरा कल्याण इसमें है कि मेरा बच्चा बच जाए तो संसार की कोई शक्ति उसको मुझसे छीन नहीं सकेगी।' लोग रोते थे रणवीर के लिए, परन्तु मैं तो नहीं रोया। एक भी आँसू मेरी आँखों से नहीं निकला। एक दिन सत्तदेव जी अनारकली में मुझे मिले। वे महाराज जम्मू–कश्मीर के गुरु थे। मेरे पिताजी के साथ और मेरे साथ उन्हें बहुत प्रेम था। गाड़ी में बैठकर वे सामने से आ रहे थे। मैंने हँसकर उन्हें नमस्ते की। गाड़ी रोककर वे नीचे आ गए; बोले– 'खुशहाल चन्द! तेरा रणवीर अब तेरे पास आया ही समझ।' रणवीर उन दिनों जेल में मृत्यु पर विजय पाने वाले मन्त्र का जाप कर रहा था। मैंने समझा– स्वामी जी इस जाप का वर्णन कर रहे हैं या फिर आत्मिक शक्ति से ऐसी बात कह रहे हैं। हँसकर उनसे पूछा– 'क्या आपने ध्यान में ऐसी बात देखी?' वे बोले– नहीं। तेरा मुख देखकर यह बात समझ में आई। जो इतनी विपत्ति सहकर भी इस प्रकार प्रसन्नचित रह सकता है, इस प्रकार हँस सकता है, उसके बेटे को उससे छीन कौन सकता है?' और यह बात ठीक हुई।

शेष पृष्ठ 03 पर ☞

☞ पृष्ठ 02 का शेष

आनन्द गायत्री कथा

रणवीर का बाल भी बाँका न हुआ।

परन्तु गायत्री माता केवल लोक ही नहीं, परलोक भी देती है। लोक और परलोक करने वाली वह माता आयु, प्राण, प्रजा, पशु, कीर्ति, धन, सम्पत्ति देती है और ब्रह्मलोक को ले जाती है। इसलिए कीर्ति, धन–सम्पत्ति, सन्तान–बेटे–बेटियाँ, मोटरें, सम्बन्धी आदि सब–कुछ देकर इस प्यार–भरी गायत्री माँ ने कहा– 'मार सबको लात, मेरे साथ आ! मैं ब्रहलोक में ले चलूँगी।' सबको छोड़कर मैं गेरुए वस्त्र पहनकर माँ के दिखाए हुए मार्ग पर चल पड़ा।

आठ–नौ वर्ष की उस छोटी–सी अवस्था से लेकर सत्तर वर्ष की अवस्था तक, हाँ, सत्तर वर्ष का हो गया है यह शरीर.. मैं तो आनन्द स्वामी हूँ। आनन्द स्वामी की अवस्था केवल चार वर्ष साढ़े तीन महीने हुई है आज, किन्तु शरीर की आयु के इन वर्षों में, बासठ वर्ष तक एक भी दिन मुझे ऐसा याद नहीं कि जब मैंने गायत्री माँ की गोद में बैठकर अमृत न पिया हो। यह सारी कहानी मैंने आपको इसलिए सुनाई कि गायत्री–महिमा को आपके सामने रख सकूँ। आज कलियुग है अवश्य, किन्तु कलियुग में भी गायत्री–उपासना करने से वह सब–कुछ मिलता है जो भीष्म पितामह ने युधिष्ठिर को बताया था, जो शिव ने पार्वती को बताया, जो दूसरे ऋषियों और महात्माओं ने संसार को बताया था, जो जगद्गुरु शंकराचार्य, महर्षि दयानन्द ने बताया, जो गांधी और टैगोर ने बताया, लोकमान्य तिलक तथा परमहंस श्री रामकृष्ण ने बताया। वह असत्य नहीं। केवल कहने की बात नहीं। वह सत्य है, मैंने जीवन में स्वयं अनुभव करके देखा। मैं कहता हूँ– वह सत्य है, सत्य है, सत्य है!

परन्तु इससे पहले कि जाप में सफलता मिले, आवश्यक है कि ईश्वर के जिन गुणों को तुम याद करते हो उन्हें स्वयं भी अपनाने का यत्न करो। यदि तुम उसे ओ३म् कहते हो, रक्षक मानते हो तो स्वयं भी किसी की रक्षा करो। तुम उसे 'भूः' कहते हो, प्राणाधार मानते हो, तो स्वयं भी किसी के प्राणाधार बनने का यत्न करो। तुम यदि उसे 'भुवः' कहते हो और दुःखों का विनाशक समझते हो तो यत्न करो कि तुम स्वयं व्यर्थ में अपने लिए दुःख की उत्पत्ति न करते जाओ। यत्न करो कि दूसरों के दुःख दूर हों। तुम यदि उसे 'स्वः' कहते हो, सुखों का दाता मानते हो तो यत्न करो कि तुम्हारे कारण से दूसरों को भी सुख होवे। यह है वास्तविक विधि गायत्री–उपासना की, इस परम पुण्य मन्त्र के जाप की। मीरासी और भाट की तरह केवल ईश्वर को उसके गुण न बताते जाओ, इन गुणों को अपने अन्दर धारण करने की कोशिश भी करो।

जाप करने का अभिप्राय यह है कि जिन गुणों को तुम अपने अन्दर लाना चाहते हो, उन्हें बार–बार याद करो। स्कूल के बच्चे जैसे अपना सबक रटते हैं, इस तरह रटो, सोच–समझकर रटो।

कुछ लोग कहते हैं कि क्यों जी! बार–बार एक ही बात कहने का क्या लाभ है? एक ही बार ईश्वर को क्यों न कह दें कि हमें सीधे रास्ते से ले चल, हमारी बुद्धि को प्रेरणा दे?

ऐसे लोगों से मैं पूछता हूँ कि जब किसी आदमी को मलेरिया हो जाए तो क्या तुम एक ही बार उसको कुनीन देकर बस कर देते हो? क्यों नहीं ऐसा करते कि रोगी को एक बार कुनीन दे दी और उसके बाद उसे छोड़ दिया, चाहे व मरे या जिए? नहीं, ऐसा नहीं किया जाता। कुनीन की आवश्यकता तब तक रहती है जब तक मलेरिया के कीटाणु शरीर में विद्यमान हैं। बार–बार जिस प्रकार से कुनीन खानी पड़ती है, उसी प्रकार आत्मा के ऊपर जमा हुआ पापों का मैल जब तक दूर न हो जाए, विषय और विकार के विषाणु जब तक समाप्त न हो जाएँ, घूँघट के पट जब तक खुल न जाएँ, तब तक जाप करना पड़ता है, बार–बार करना पड़ता है। यह सब–कुछ कब तक होगा? हृदय की गाठें कब खुलेंगी? पाप का अँधेरा कब दूर होगा? इच्छा तथा वासनाओं की अग्नि कब बुझेगी? यह अपने आप से पूछो। प्रत्येक व्यक्ति को रोग भिन्न–भिन्न होता है। परन्तु जब तक यह अवस्था उत्पन्न न हो जाए तब तक जाप करना होगा। गायत्री माँ की उपासना करनी होगी। उसको छोड़कर दूसरा साधन नहीं।

लोहे का गोला होता है न? इसे आग में डालने से जिस प्रकार वह अग्नि–जैसा हो जाता है, इसी प्रकार परमात्मा के गुणों को बार–बार याद करने से, इन गुणों को अपने अन्दर धारण करने का यत्न करने से आत्मा भी परमात्मा के समीप पहुँचता है; उस सुख तथा आनन्द को प्राप्त करता है, जो केवल परमात्मा के पास है। किन्तु इससे पहले कि ऐसा हो, जो केवल परमात्मा के पास है। किन्तु इससे पहले कि ऐसा हो, परमात्मा के गुणों को कुछ तो अपनाने का यत्न करो! कुछ–कुछ तो तुम भी यह सब–कुछ करो जिसे वह करता है!

यह है गायत्री मन्त्र के उन पहले चार शब्दों की महिमा। इसके बार उसके तीन भाग होते हैं–

पहला भाग है– **'तत्सवितुर्वरेण्यम्'**

दूसरा भाग है– **'भर्गो देवस्य धीमहि'**

तीसरा भाग है– **'धियो यो नः प्रयोदयात्।'**

यह तीन भाग वाला चौबीस अक्षरों का गायत्री मन्त्र है। इसके एक भाग की महिमा का वर्णन एकादशाक्षी (ग्यारह आँख वाले) मौद्गल्य और ग्वाल मैत्रेय के प्रश्नोत्तर में आता है। मौद्गल्य को ग्यारह आँखों वाला कहा जाता था तो इसलिए नहीं कि उसके चेहरे पर दो के स्थान पर ग्यारह आँखे थीं, अपितु इसलिए कि योग की शक्ति ने उसके अपने मन में पाँच ज्ञानेन्द्रियों, पाँच कर्मेन्द्रियों और ग्यारहवें मन की आँख को खोल दिया था, इसीलिए एकादशाक्षी अर्थात् ग्यारह आँखों वाला कहते थे उसे। ग्वाल मैत्रेय प्रश्न करते हैं और मौद्गल्य उत्तर देते हैं। इस प्रश्नोत्तर को पूर्णरीति से विस्तारपूर्वक कभी फिर सुनाऊँगा। आज केवल इन शब्दों का वर्णन करना चाहता हूँ जो पहले और दूसरे भागों में आते हैं। इनमें एक शब्द है– 'सविता'। सविता परमात्मा की वह शक्ति है जो सृष्टि को बनाने के लिए प्रकृति को प्रेरणा देती है। इस समय वह सोई हुई प्रकृति को प्रेरणा करके कहती है कि 'जाग! मुझे सृष्टि की रचना करनी है।' 'सविता' के कितने ही अर्थ शास्त्रों में आते हैं– उत्पन्न करने वाला, जगानेवाला, गर्भ से मुक्ति दिलाने वाला, प्रकट करने वाला, प्रकट हुए का विनाश करने वाला आदि इसके अर्थ हैं। सबके लिए एक शब्द 'सविता' रखा गया। सविता वह सबसे बड़ी शक्ति है, सृष्टि की वह आदि शक्ति है, भगवान् की वह महामाया है जिससे वह सब–कुछ बन रहा है, जिससे वह सब–कुछ बनता है। गायत्री मन्त्र का देवता भी 'सविता' है। संसार में प्रत्येक व्यक्ति के अन्दर विराजमान वह लगातार प्रेरणा करता है, बच्चों को भी, बूढ़ों को भी; जो अच्छा काम करते हैं उनको भी। वह सदा अन्दर से पुकारता रहता है। सविता भगवान् की वह शक्ति है, जिसके द्वारा वह मनुष्य से बातें करता है।

भगवान् की बातें करना कुछ लोगों को बहुत विचित्र–सा प्रतीत होगा, विशेषतः उन व्यक्तियों को जो मेरी तरह भगवान् को निराकार मानते हैं। शब्द भी तो एक आकार है! 'निराकार में शब्द कैसे हो सकता है?' ऐसा वे पूछते हैं। किन्तु महर्षि दयानन्द के इन शब्दों को सुनिए तो मालूम होगा कि भगवान् वास्तव में बातें करता है। महर्षि 'सत्यार्थप्रकाश' के सातवें समुल्लास में कहते हैं– 'और जब आत्मा मन और इन्द्रियों को किसी विषय में लगाता व चोरी आदि बुरी या परोपकारादि अच्छी बात के करने का जिस क्षण आरम्भ करता है वह उस समय जीव की इच्छा, ज्ञानादि उसी इच्छित विषय पर झुक जाती है। उसी क्षण में आत्मा के भीतर से बुरे काम करने में भय, शंका और लज्जा तथा अच्छे कामों के करने में अभय, निःशंकता और आनन्दोत्साह उठता है। वह जीवात्मा की ओर से नहीं किन्तु परमात्मा की ओर से है।'

इस प्रकार परमात्मा भीतर से प्रेरणा करता है। वह ध्वनि प्रत्येक व्यक्ति के अन्दर से उठती है। जो भी सुनना चाहे वह उसको सुन सकता है। किन्तु अन्दर की ध्वनि को सुनने के लिए पहले बाहर की ध्वनि को बन्द करना पड़ता है।

एक कमरे में एक सज्जन बैठे थे। दीवार पर घड़ी लगी हुई थी। लगातार चलती हुई वह टकटक कर रही थी! वह सज्जन इसकी टकटक को सुन रहे थे। बाहर गली में ऊँची ध्वनि से बाजे बजने लगे। इस सज्जन को घड़ी की ध्वनि आनी बन्द हो गई। भयभीत होकर उन्होंने नौकर को बुलाकर कहा– 'देखो तो, सम्भवतः यह घड़ी चलनी बन्द हो गई है। इसकी ध्वनि सुनाई नहीं पड़ती।' नौकर ने ध्यान से घड़ी को देखा। वास्तविक बात को समझकर बोला– 'घड़ी बन्द नहीं हुई। बाहर की ध्वनि इतनी अधिक है कि इसकी टकटक सुनाई नहीं देती।

मनुष्य का यह मन एक कमरा है। इसके अन्दर परमात्मा की ध्वनि घड़ी की तरह लगातार टकटक करती है, लगातार बोलती है किन्तु बाहर की इच्छाओं और वासनाओं के जो बाजे बजा रखे हैं उन्होंने इस ध्वनि को दबा दिया है। अन्दर के पट तब खुलें, जब बाहर के पट बन्द हों।

बाहर के पट बन्द करने से ही घूँघट के पट खुलते हैं; तब प्रियतम प्रभु का दर्शन होता है। तब उसको ध्वनि सुनाई देती है। यह ध्वनि ही 'सविता' है जो लगातार प्रेरणा करता है, जो आदि शक्ति है, जिसकी प्रेरणा से यह अनन्त प्रकृति जाग उठा। उसकी कृपा हो जाए तो मनुष्य को कल्याण का मार्ग क्यों नहीं मिलेगा? अवश्य मिलेगा। इस शक्ति के लिए कुछ भी असम्भव नहीं, किन्तु इसे सुनना चाहिए, समझना चाहिए।

क्रमशः....

ओ३म्
परमात्मा का सर्वोत्तम अभिधान

● डॉ. धर्मवीर सेठी

अ, उ और म् – दो स्वर और एक व्यंजन– के योग से बना अद्‌भुत शब्द 'ओ३म्' सृष्टि, स्थिति और प्रलय का द्योतन करने वाले न जाने कितने ही दार्शनिक भाव अपने उन्तस् में समेटे हुए हैं। कहीं–कहीं इस शब्द को 'ओ३म्' ओं, ॐ, ॐ इन रूपों में भी लिखा हुआ आप देखते होंगे। परन्तु वेदानुकूल इस की शुद्ध वर्तनी 'ओ३म्' है जिसमें 'प्लुत' स्वर का प्रयोग किया गया है। उच्चारण करते समय अपने फेफड़ों में पूरी साँस भर कर फिर साँस छोड़ते हुए इस शब्द का होंठ स्वतः धीरे–धीरे बन्द होने तक उच्चारण होता है। पंजाबी भाषा की गुरुमुखी लिपि में इसे ੧ਓ (इक ओंकार) और उर्दू (फारसी लिपि) में इसे "/ के रूप में लिखा जाता है ।

अपनी प्राचीनतम सनातन वैदिक मान्यताओं को अक्षरशः मानने और डंके की चोट से मनवाने वाले आर्य समाज के संस्थापक महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती ने जब अपने प्रथम दार्शनिक ग्रन्थ 'सत्यार्थ प्रकाश' की रचना की तो मानों आरम्भ में उस परम पिता परमात्मा का आशीर्वाद प्राप्त करने हेतु ही उन्होंने सम्भवतः प्रथम समुल्लास (अध्याय) में ईश्वर के एक सौ नाम गिनवा कर यह बताने का प्रयास किया कि वैदिक साहित्य में इन शब्दों का प्रयोग, प्रकरणानुकूल, परमेश्वर के नाम के लिए ही किया गया है। और कि परमेश्वर का कोई भी नाम अनर्थक नहीं है। जैसे परमेश्वर के अनन्त गुण, कर्म, स्वभाव हैं, अनके अनुरूप वैसे ही उनके अनन्त नाम भी है।

इस गम्भीर विषय को अधिक स्पष्ट करने के लिए यह आवश्यक है कि उन सौ नामों का उल्लेख यहाँ अवश्य किया जाए जो अधोलिखित हैं:

ओ३म् (ओं, ओम्), हिरण्यगर्भ, खम, वायु, ब्रह्म, तैजस, अग्नि, ईश्वर, मनु, प्रजापति, आदित्य, अज, इन्द्र, प्राज्ञ, नारायण, सत्, प्राण, मित्र, चन्द्र, चित् (ज्ञान), वरुण, मङ्गल, आनन्द, ब्रह्मा, अर्यमा, बुध, अनादि, अनन्त, विष्णु, बृहस्पति, शुक्र, नित्य, रुद्र, उरुक्रम, शनैश्चर, शुद्ध, शिव, सूर्य, राहू, अक्षर, परमात्मा, केतु, बुद्ध, स्वराट्, परमेश्वर, यज्ञ, मुक्त, सविता, निराकार, होता, कालाग्नि, देव, बन्धु, निरंजन, दिव्य, सुपर्ण, कुबेर, गणेश (गणपति), गरुत्मान्, पृथिवी, पिता, जल, पितामह, विश्वेश्वर, मातरिश्वा, आकाश, प्रपितामह, भूमि, अन्न, माता, देवी, विराट्, अन्नाद, शक्ति, अत्ता, आचार्य, विश्व, वसु, गुरु, श्री, लक्ष्मी, भगवान् कवि, सरस्वती, सर्वशक्तिमान्, पुरुष, न्यायकारी, विश्वम्भर, काल, दयालु, शेष, अद्वैत, आप्त, निर्गुण, शङ्कर, सगुण, महादेव, अन्तर्यामी, प्रिय धर्म्मराज, स्वयम्भू, यम, कूटस्थ

इन नामों का विश्लेषण करते हुए कुछ आश्चर्यचकित करने वाले तथ्य पाठक के सामने उपस्थित होते हैं। सप्ताह के सभी सात दिन सोम से रविवार तक परमात्मा के नाम हैं। किसी के ऊपर न मंगल हावी होता है न शनि का प्रकोप जो पाखण्डियों ने जनता को भयभीत करने के लिए बना रखे हैं। पौराणिकों की त्रिमूर्ति–ब्रह्मा, विष्णु, महेश से भी परमात्मा का ही द्योतन होता है। यहाँ तक कि राहू और केतु भी इसी श्रेणी में आते हैं। पृथिवी, जल, तेज, वायु और आकाश – ये पंच तत्व भी उसी परमेश्वर की लीला का बखान करते हैं। सत्, चित्, आनन्द तो उस परमेश्वर का स्वरूप हैं ही। अनादि, अनन्त उसे ही तो कहा जाता है। नित्य, शुद्ध, बुद्ध और मुक्त उसी परमेश्वर के ही तो स्वभाव हैं। वह दयालु परन्तु न्यायकारी है। इसीलिए तो जीव जैसा कर्म करता है वैसा ही फल पाता है। साकार और निराकार, निरंजन शब्द भी प्रकरणानुसार उसी दिव्यता की ओर संकेत करते हैं। नौ देवियों की जो चर्चा पुराणों में की गई है उन्हें भी ऋषिवर ने अलग–अलग परिभाषाओं के साथ परमेश्वर के नाम ही माना है। विश्व का भरण–पोषण करने के कारण वह 'विश्वम्भर' भी है। 'शिव' अर्थात् कल्याण– जो सब का कल्याण करने वाला है 'तन्मे मनः शिव संकल्पं अस्तु'! अन्याय करने वालों को रुलाने के कारण वह 'रुद्र' भी है। सबके द्वारा वरणीय (चाहने वाला) और सबको चाहने वाला होने से वह 'वरुण' भी है। 'अग्नि' अग्रणी भवति'। ध्यान रहे चार वेदों में से पहले वेद ऋग्वेद का शुभारम्भ ही 'अग्नि' शब्द से होता है– **'अग्निमीड़े पुरोहितं यज्ञस्य देवं ऋत्विजं। होतारम् रत्न धातमम्'**

इस लम्बी सूची में कुछ नाम (शब्द) तो पर्यायवाची हैं, इसमें सन्देह नहीं। परमेश्वर को;

त्वमेव माता च पिता त्वमेव,
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविड़ं त्वमेव,
त्वमेव सर्व मम देव देव।।

जब कहा जाता है तब माता, पिता, बन्धु, विद्या (सरस्वती) आदि सभी उसी के नाम माने गए हैं। शिव का पर्याय शंकर भी है। शम् अर्थात् 'कल्याणं' करोति इति शंकरः जो सृष्टि के जीवों का कल्याण करता है वही ईश्वर शंकर भी है।

एक और सारगर्भित नाम है 'हिरण्यगर्भ' अर्थात् जो सूर्यादि तेजस्वरूप पदार्थों का गर्भ अर्थात् उत्पति और निवास स्थान है। यजुर्वेद का एक मन्त्र है–

हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः
पतिरेक आसीत्।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै
देवाय हविषा विधेम।।

इस मन्त्र से यह बात भी स्पष्ट होती है कि वह परमेश्वर एक ही है, नाम चाहे उसके अनेक क्यों न हों और उसीने पृथिवी और द्युलोक को धारण भी किया हुआ है।

इक ओंकार, सतगुर परसाद, कर्ता, पुरख, निरभो, निरवैर, अकाल जूनी इत्यादि

अव्वल अल्लाह नूर उपाया, कुदरत दे
सब बन्दे।
एक नूर ते सब जग उपज्या, कौन भले
कौन मन्दे।।
इन्द्रं, मित्रं वरुणमग्निमाहुरथो
दिव्यस्स सुपर्णो गरुत्मान्।
एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्त्यग्निं यमं
मातरिश्वानमाहुः।।

(ऋग्वेद – 1/164/46)

परमेश्वर के नामों की इस लम्बी सूची में **'ओ३म्'** ही एक ऐसा नाम है जिससे परमेश्वर के अनेक नामों का ज्ञान उपलब्ध हो जाता है। परन्तु **इन नामों को प्रकरणानुसार ही ग्रहण किया जाना चाहिए।** यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 17 के अनुसार 'ओ३म् खं ब्रह्म' ये तीनों शब्द भी उसी परमेश्वर के नाम हैं। 'अवति इति ओम्'–रक्षा करने से; 'आकाशम् इव व्यापकत्वात् खम्' आकाश की भाँति व्यापक होने से और 'सर्वेभ्यो बृहत्वात्त ब्रह्म' अर्थात् सबसे बड़ा होने से– ये सब परमेश्वर के ही नाम है। छान्दोग्य और माण्डूक्य उपनिषदों में भी इसी 'ओम्' की चर्चा है।

इस चर्चा में मैं कठोपनिषद् के यम–नचिकेता संवाद के एक अंश को उद्‌धृत करने का मोह संवरण नहीं कर सकता। जिज्ञासु बालक नचिकेता ने यमाचार्य को कहा कि हे भगवन्। जो आत्मतत्व, धर्म ओर अधर्म से पृथक है, जो कारण और कार्य रूप प्रपंच से पृथक है, जो भूत और भविष्य काल से भी पृथक है–ऐसे उस परमात्मा से मुझे भी परिचित कराइए। तो आचार्य उसे आत्मतत्व पाने का साधन बताते हैं:

सर्वे वेदा यत्पदमामनन्ति
तपांसि सर्वाणि च यद्वदन्ति।
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति
तत्तेपदं संग्रहेण ब्रवीम्योमित्येतत्।।

–1/2/15

अर्थात् सभी वेदादि शास्त्र जिस पद (शब्द–परम सत्ता) का वर्णन करते हैं, जिसको जानने के लिए मुमुक्षु (मोक्ष की इच्छा वाले) अनेक प्रकार की तपस्या करते हैं, जिसको पाने के लिए यति लोग ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं, उस परमसत्ता को अत्यन्त संक्षेप में मैं तुझे बताता हूँ और वह है 'ओ३म्'। कैसे गागर में सागर भर दिया गया है।

इसी प्रसंग में यमाचार्य आगे कहते हैं:

एतद्ध्येवाक्षरं ब्रह्म
एतद्ध्येवाक्षरं परम्।
एतद्ध्येवाक्षरं ज्ञात्वा यो
यदिच्छति तस्य तत्।।
एतदालम्बनं श्रेष्ठमेतदालम्बनं परम्।
एतदालम्बनं ज्ञात्वा ब्रह्म लोके
महीयते।। 1/2/16,17

इन दोनों मंत्रो में 'ओ३म्' अर्थात् ब्रह्म की महिमा का वर्णन है। ओ३म् का स्मरण, ध्यान, जप ही ब्रह्म का वास्तविक स्मरण है और यह जप सभी जपों में उत्कृष्ट है। **यह ओ३म् जीवन नौका को पार करने का परम साधन है।** जो इसके महत्त्व को जान जाता है वह ब्रह्मलोक को पा लेता है। उसकी सब कामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं।

अस्तु! ईश्वर के अन्य सब नाम

शेष पृष्ठ 05 पर ☞

संस्कारविहीन शिक्षा– बढ़ते अपराध

● नरेन्द्र आहुजा 'विवेक'

देश में निरंतर बढ़ते अपराधों विशेषरुप से अपनी आधी आबादी पर हो रहे बलात्कार जैसे जघन्य अत्याचारों को देखते हुए इसके कारणों और दूरगामी समाधानों पर जब हम विचार करते हैं तो देश की वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में कमियाँ और दोष स्पष्ट दिखाई देते हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत देश की नीति नियंताओं ने इस प्रचलित शिक्षा प्रणाली को चुन लिया। इस शिक्षा व्यवस्था को ब्रिटिश गुलामी के दिनों में लार्ड मैकाले द्वारा इस देश को सदा सर्वदा के लिए मानसिक रुप से गुलाम बनाए रखने के लिए लागू किया गया था। लार्ड मैकाले ने इस शिक्षा प्रणाली को ब्रिटिश साम्राज्य की नीवें मजबूत करने के उद्देश्य से इस सोच के साथ थोपा था कि हम इस देश की भावी पीढ़ी को उसकी संस्कृति की जड़ों से काट देंगे। परन्तु ना जाने क्यों किन कारणों से स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत देश के नीति नियंताओं ने गुलामी की मानसिकता की प्रतीक मैकाले की शिक्षा प्रणाली को अपनी भावी पीढ़ी के निर्माण के लिए अपना लिया जिसके दुष्परिणाम हम अपने समाज की वर्तमान अवस्था में भुगत रहे हैं। मैकाले की इस शिक्षा प्रणाली में तथाकथित विकास के नाम पर विनाश की ओर धकेलती इस शिक्षा में संस्कारों, धर्म शिक्षा आदि का कोई स्थान नहीं था। मैकाले की यह शिक्षा प्रणाली केवल अंग्रेजों की सेवा करने के लिए क्लर्क और बाबू बनाने के लिए थी। मैकाले की इस शिक्षा प्रणाली में वर्तमान समय में भी हम अच्छे डाक्टर, इंजीनियर, मैनेजर आदि तो बना सकते हैं लेकिन चूंकि इसमें संस्कार देने की कोई व्यवस्था ना होने के कारण इन डाक्टरों, इंजीनियरों और मैनेजरों को हम एक अच्छा संवेदनशील मनुष्य बना पाने में पूरी तरह नाकाम हैं। यदि एक अच्छा डाक्टर एक अच्छा इंसान नहीं है तो ईश्वर का रुप समझा जाने वाला डाक्टर सेवा की भावना से किए जाने वाले कार्य को धन कमाने का व्यवसाय बना लेते हैं और शायद तभी किडनी चोरी, कन्याभ्रूण हत्या, मां के गर्भ में लिंग परीक्षण, दवाइयों और जांच में कमीशनखोरी जैसी घटनाएँ सामने आती हैं और पूरे चिकित्सक समाज को शर्मिंदगी झेलनी पड़ती है। कमोबेश यही स्थिति इस शिक्षा प्रणाली से उत्पन्न प्रत्येक प्रकार के व्यवसायी की हो जाती है।

इसके समाधान पर चिंतन करते समय हम पाते हैं कि स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत उस समय तीन प्रकार की शिक्षा प्रणालियाँ हमारे देश में उपलब्ध थीं। प्रथम प्राचीनतम गुरुकुलीय शिक्षा व्यवस्था जिसमें शिक्षार्थी ब्रह्मचारी अपने माता–पिता का लाड़ दुलार छोड़कर आचार्य के गुरुकुल में रहकर शिक्षा ग्रहण करते हुए नया जन्म पाते थे। गुरुकुल शिक्षा व्यवस्था में बिना किसी जाति, वर्ण या वर्गभेद के सभी ब्रहमचारी एक साथ गुरुकुल में स्थापित आचार्य की व्यवस्था के अर्न्तगत रहते हुए जीवन की शिक्षा संस्कार प्राप्त करते थे। यह गुरुकुलीय शिक्षा व्यवस्था पहली बार महाभारत काल में भंग हुई जब राजा धृतराष्ट्र ने पुत्रों के मोह में अंधे होकर गुरु द्रोण को राज्य व्यवस्था के अर्न्तगत रहकर दुर्योधन आदि समस्त कौरवों को शिक्षा देने के लिए विवश कर दिया। तब शायद पहली बार दुर्योधन आदि को शिक्षा प्राप्त करते समय यह लगा कि हमारा आचार्य तो हमारे पिता की राज्य व्यवस्था के अधीन एक वित्तपोषित कर्मचारी है। अतएव उनके मन में कभी भी आचार्य के प्रति आदर का भाव नही रहा और उसी विद्यार्थी काल में आया जिद, उद्दंडता और बड़ों के प्रति अनादर का भाव जो आगे चलकर महाभारत के युद्ध का कारण बना। उस समय इस गुरुकुलीय शिक्षा को स्वामी श्रद्धानंद ने शिक्षा यज्ञ में अपना सर्वस्व आहूत करते हुए सफलता पूर्वक हरिद्वार, इन्द्रप्रस्थ, मातिन्डु आदि स्थानों पर गुरुकुल स्थापित किए और इतिहास साक्षी है कि इन गुरुकुलों ने शिक्षा संस्कार देकर स्वतंत्रता संग्राम में अपने प्राणों की आहुति देने वाले कितने क्रान्तिकारी तैयार किए। लेकिन इस गुरुकुलीय शिक्षा प्रणाली को उस समय के नेताओं ने पुरानी धार्मिक कट्टरता वाली और प्रगति विरोधी मानकर खारिज कर दिया।

दूसरी शिक्षा प्रणाली जो शायद समय के अनुकूल थी। महात्मा हंसराज द्वारा नवीन और प्राचीन को जोड़कर बनाई गई एक अनूठे आंदोलन के रुप में चलाई गई दयानन्द एंग्लो वैदिक शिक्षा व्यवस्था जिसे श्वेतवस्त्रधारी जीवन समर्पित करके चलाने वाले तपस्वी महात्मा हंसराज ने स्थापित किया। जिसमें आधुनिकतम शिक्षा के साथ साथ महर्षि देव दयानन्द द्वारा दिए गए सत्य वैदिक आर्य सिद्धांतों से भी छात्रों का परिचय करवाया जाता था।

परन्तु स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत शायद मानसिक गुलामी से पूरी तरह ना मुक्त हो पाने के कारण उस समय के नेताओं ने गुलामी की प्रतीक मैकाले की शिक्षा व्यवस्था को अपना लिया। बच्चों के मन कोमल संवेदनशील कच्ची उर्वर मिट्टी की तरह होते हैं। उनमें जैसे बीज बो दिए जाए बड़े होकर वैसे ही बन जाते हैं। आज की शिक्षा व्यवस्था द्वारा हमने बच्चों को केवल पाश्चात्य भोगवाद की प्रेरणा दी और किसी भी प्रकार के कोई संस्कार नहीं दिए। आज वही पीढ़ी युवा अवस्था में संस्कार विहीन होकर अपराधों की तरफ विशेष रुप से भोगवाद में फंसकर नारी को भोग की वस्तु मानकर बलात्कार सरीखे अत्याचार कर रही है तो हम बड़ी–बड़ी बहस करते हैं और कानून व्यवस्था के लिए एक दूसरे पर दोषारोपण करते हुए राजनीति करते हैं। पर हमारा ध्यान इस बीमारी के मूल यानि दोषी शिक्षा व्यवस्था पर नहीं जाता बल्कि उसका तो हम और अधिक व्यवसायीकरण करते जा रहे हैं। हम आज अपने बच्चों को बड़े–बड़े डोनेशन देकर उच्च शिक्षा इसलिए दिलवाते हैं कि वह बड़ा होकर किसी एम.एन.सी में मोटा पैकेज लेगा। हम भी एक व्यापारी की तरह बच्चों की शिक्षा में व्यवसाय की तरह इनवेस्ट करते हैं और फिर रिटर्न की आशा करते हैं हमने खुद भी कभी बच्चों को शिक्षा में संस्कार देने का प्रयास नहीं किया। लेकिन अब भी यदि हम जाग जाएँ और इन सभी बुराइयों की जड़ वर्तमान शिक्षा प्रणाली मे परिवर्तन करते हुए यदि नैतिकता एवं धर्म को शिक्षा में भी शामिल कर लें तो निश्चित रुप से बच्चों को संस्कारवान बना पाएँगे और यही बच्चे कल के अच्छे आदर्श नागरिक बनकर राष्ट्र की मजबूत बुलंद इमारत का आधार बनेंगे। जब हमारे नागरिक संस्कारवान और संभ्रांत होंगे तो अपराध स्वतः कम हो जाएँगे और फिर किसी भी संस्कारवान व्यक्ति से नारी पर अत्याचार नहीं होगा। कहा भी जाता है यदि पहले सावधानी बरती जाए और बीमारी पैदा होने वाले कारणों को समाप्त कर दिया जाए तो निश्चित रूप से वह बीमारी नहीं होगी।

602 जी एच 53 सै. 20 पंचकूला

☞ पृष्ठ 04 का शेष

परमात्मा का सर्वोत्तम ...

गौण हैं और **'ओ३म्' नाम ही मुख्य है।** मुमुक्षों को इसी का जप और ध्यान करना चाहिए।

श्रीमद्भगवद्गीता अध्याय 8 श्लोक 12–13 में भी इसी 'ओ३म्' के महत्व का बखान किया गया है।

यदक्षरं वेदविदो वदन्ति
विशन्ति यद्यतयो वीतरागाः।
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति
तत्ते पदं सङ्ग्रहेण प्रवक्ष्ये।।

वेद के जानने वाले विद्वान् सच्चिदानन्द रूप परम पद को अविनाशी कहते हैं, आसक्ति हीन यत्नशील संन्यासी महात्मा जिसमें प्रवेश करते हैं और जिस परम पद को चाहने वाले ब्रह्मचारी ब्रह्मचर्य का आचरण करते हैं, उस परमपद् को मैं (कृष्ण) तेरे (अर्जुन) के लिए संक्षेप में कहूँगा।

सर्वद्वाराणि संयम्य मनो
हृदिनिरुध्य च।
मूर्ध्न्याधायात्मनः प्राणमास्थितो
योगधारणाम्।।
ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म
व्याव्हरन्मामनुस्मरन्।
यः प्रयाति त्यजन्देहं स याति परमां
गतिम्।।

अर्थात् सब इन्द्रियों के द्वारों को रोक कर तथा मन को हृदय में स्थिर करके, फिर उस जीते हुए मन के द्वारा प्राण को मस्तक में स्थापित करके, परमात्मा सम्बन्धी योग धारणा में स्थिर होकर जो पुरुष 'ओ३म्' उस एक अक्षररूप ब्रह्म का उच्चारण करता हुआ और उसके अर्थ स्वरूप मुझ निर्गुण ब्रह्म का चिन्तन करता हुआ शरीर को त्याग कर जाता है, वह पुरुष परमगति को प्राप्त होता है।

अस्तु! इस 'ओ३म्' शब्द के दर्शन (Philosophy) को समझते हुए आइए प्राणायाम के रूप में भी पूरी सांस भरते हुए इस का उच्चाण कर अपने को अहोभागी समझें और कोई मंत्र–चाहे प्रणव (गायत्री) मंत्र हो या कोई अन्य–याद रहे या न रहे, सृष्टिकर्ता का एक अद्वितीय नाम 'ओ३म्' तो अवश्य याद रहेगा। इसी पर उठते–बैठते अपना ध्यान केन्द्रित रखें।

अन्त में इन पंक्तियों को गुनगुनाते हुए मैं इस लेख की इति करना चाहूँगा:

ओ३म् है जीवन हमारा,
ओ३म् प्राणाधार है।
ओ३म् है कर्ता विधाता
ओ३म् पालनहार है।

इत्यलम्

ए–1055, सुशान्त लोक–1,
गुरुग्राम–122009

वेद परमात्मा का नित्य ज्ञान है

● ओम प्रकाश आर्य

वेद शब्द "विद् ज्ञाने, विचारणे, सत्तायाम्, चेतनाख्याननिवासेषु" धातु से ज्ञान, विचार, सत्ता, चेतनाख्याननिवास अर्थ द्योतित करता है। ये चारों अर्थ महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा लिखित पुस्तक "धातुपाठः" में दिया गया है। यदि इन अर्थो पर विचार करें तो निम्न अर्थ ध्वनित होते हैं–

1. ज्ञान– वेद का अर्थ ज्ञान होता है। यह ज्ञान नित्य है। कभी नष्ट नहीं होता। सृष्टि का प्रलय होने पर भी यह ज्ञान परमात्मा में विद्यमान रहता है। ऐसा मनीषियों का विचार है कि इस अनन्त सृष्टि में जहाँ कभी भी मानव–सृष्टि है सर्वत्र यही वेदज्ञान है। क्योंकि परमात्मा कभी पक्षपात नहीं करता। चारों वेदों में ज्ञान भरा पड़ा है। यदि यह पक्षपात ज्ञान मनुष्य को न मिले तो वह कभी विद्वान् नहीं बन सकता। बीज रूप में उसने सारा ज्ञान इनमें दे दिया है। इसी कारण ऋग्वेद को ज्ञानकांड, यजुर्वेद को कर्मकाण्ड, सामवेद को उपासनाकाण्ड और अथर्ववेद को विज्ञान काण्ड माना जाता है। विश्व का सारा ज्ञान इसमें निहित है। प्रथम ज्ञान देने के कारण परमात्मा को गुरुओं का गुरु कहा गया है। **पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात्।।** योग. 1/26 अर्थात् वह पहलों का भी गुरु है। उपदेष्टा है। काल के द्वारा वह परपरमात्मा सीमित नहीं होता। उसी परमात्मा गुरु के ज्ञान से मानव का कल्याण हो सकता है अन्य कोई मार्ग नहीं है।

2. विचार–वेद में परमात्मा का विचार गूढ़ार्थ रूप में निहित है। वेद में कोई कथा–कहानी, इतिहास नहीं है अपितु उसमें चिन्तन है, दर्शन है, विद्वान् है, जीवन के कल्याणनार्थ मोक्षपरक उपाय है। इन विचारों को प्रसारित करना मानव का सर्वोत्कृष्ट कर्म माना गया है। वेद का विचार विश्व को शांति, प्रेम, कल्याण का मार्ग दिखा सकता है।

3. सत्ता–वेद शब्द ध्वनित करता है कि वह परमसत्ता परमात्मा का दिया ज्ञान है। उसकी सत्ता है इसलिए वह ऐसा ज्ञान प्रदान करता है। परमात्मा की सत्ता के कारण ही वेद का उद्‌भव होता है। परमात्मा और वेद को एक सिक्के के दो पहलू के रूप में देखा जा सकता है। परमात्मसत्ता को वेद व्याख्यायित करता है।

4. चेतनाख्यान निवास–परमात्मा चेतन है। जीवात्मा भी चेतन है। सर्वव्यापक है। एकदेशीय है। व्यापक भाव का द्योतक है वेद। जीवात्माओं के कल्याण के लिए परमात्मा चेतन सत्ता वेद ज्ञान प्रदान करती है। चेतन परमात्मा चेतन जीवात्मा के लिए वेद ज्ञान प्रदान करता है। यह किसी मानव के द्वारा लिखित ज्ञान नहीं है, साक्षात् ईश्वर की वाणी है। यहाँ वेदों की उत्पत्ति परमात्मा से होने के कारण अपौरुषेय–वेद अपौरुषेय है। महर्षि दयानन्द सरस्वती ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका में उल्लेख करते हैं–

तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः ऋचः सामानि जज्ञिरे।
छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत।।
यजु. 31/7

अर्थात् "उसी सर्वशक्तिमान् परमेश्वर से (ऋचः) ऋग्वेद (ऋजुः) यजुर्वेद (सामानि) सामवेद (छन्दांसि) अथर्ववेद, ये चारों उत्पन्न हुए हैं।" इनके ऋषि कौन–कौन हैं? इसका उल्लेख वे सत्यार्थ प्रकाश के सप्तमसमुल्लास में करते हैं– अग्नेर्वा ऋग्वेदो जायते वायोर्जयुर्वेदः सूर्यात्सामवेदः।। शत।। अर्थात् "सृष्टि के आदि में परमात्मा ने अग्नि, वायु, आदित्य तथा अंगिरा इन ऋषियों के आत्मा में एक–एक वेद का प्रकाश किया।" परमात्मा ने इन चारों ऋषियों के आत्मा में वेदज्ञान प्रकाशित करके अपने को प्रथम गुरु एवं गुरुओं का गुरु होने का परिचय दिया। इसी कारण वेद को अपौरुषेय कहा जाता है क्योंकि इनकी उत्पत्ति किसी पुरुष के द्वारा नहीं होती है। परमात्मा का यह ज्ञान नित्य है। प्रत्येक कल्प के आरम्भ में वह इसी ज्ञान को प्रकाशित करता है। इसी बात को भगवान मनु कहते हैं–

अग्निवायुरविभ्यस्तु त्रयं ब्रह्म सनातनम्।
दुदोह यज्ञसिद्ध्यर्थमृग्यजुः सामलक्षणम्।। मनु.।।

अर्थात् परमात्मा ने आदि सृष्टि में मनुष्यों को उत्पन्न करके अग्नि आदि चारों महर्षियों के द्वारा वेद ब्रह्मा को प्राप्त कराए और उस ब्रह्मा ने अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा से ऋग्, यजुः, साम और अथर्ववेद ग्रहण किया।" अतः वेद अपौरुषेय है। नित्य है। यह ज्ञान कभी नष्ट नहीं होता, प्रलयावस्था में परमात्मा में विद्यमान रहता है।

वेदों में कोई इतिहास नहीं–कुछ लोग वेद में ऋषियों, मुनियों, राजाओं, नदियों आदि के नाम को देखकर इतिहास की कल्पना करते हैं, जबकि वेद में ऐसा कुछ नहीं है। वेद में आए वे समस्त नाम गुणवाची हैं न कि किसी व्यक्ति या स्थान के वाचक हैं। बौदिक सम्पत्ति पुस्तक के लेखक पं. रघुनन्दन शर्मा ने इनका स्पष्टीकरण करते हुए लिखा है–"अगस्त एक तारे का नाम है। विश्वमित्र, कौशिक, वशिष्ठ नक्षत्र हैं। अत्रि, कण्व, जमदग्नि रश्मियाँ हैं। अश्विनौ आकाशीय पदार्थ, कृष्ण–अर्जुन दिन, राधा अन्न, इक्ष्वाकु औषधि, जम्बरीश वृक्ष, त्रिशंकु आकाशीय पदार्थ, गंगा–यमुना, सरस्वती, शुतुद्री, परुष्णी, असिक्णी, वितस्ता आदि किरणे, अम्बा–अम्बिका–अम्बालिका औषधियाँ बताया हैं।" ये नाम लोक में भी आते हैं, इसलिए लोगों ने वेदों में इतिहास की कल्पना कर लिया जबकि वेद में कहीं भी कोई इतिहास नहीं है। उसमें जादू–मंतर जैसी बातें नहीं है। टोना–टोटका जैसा वर्ण कुछ भी नहीं है। ये सारे नाम गुणवाची हैं। पदार्थो के हैं।

वेदों के सभी शब्द यौगिक है वे किसी न किसी धातु से निष्पन्न हैं। उनमें रूढ़ि अर्थ वाले शब्द नहीं हैं। जैसा कि लोकभाषा में रूढ़ि अर्थ वाले शब्द होते हैं। यहाँ तक कि वेद में एक अक्षर वाला धातु भी कोई न कोई अर्थ ध्वनित करता है। जैसे–पृ प्रीति अर्थ में, धि धारण अर्थ में, रि, पि गति अर्थ में, णू, धू, गु, धु स्तवन विधूनन पुरीषोत्सर्ग गतिस्थैर्य अर्थ में, क्षि निवासगति अर्थ में, षू प्रेरणा अर्थ में, गृ निगरण अर्थ आदि। अन्य वेदों के सारे शब्द धातुओं से बने हैं। उनका अर्थ उसी धातु के अर्थ से जाना जाता हैं नाम, आख्यात, उपसर्ग, निपात ये चार के शब्द हैं।

वेदो में दो प्रकार की विद्या–वेदों में दो प्रकार की विद्या है–परा और अपरा। परा अर्थात् आध्यात्मिक विद्या आत्मा, परमात्मा, मोक्ष से सम्बन्धित ज्ञान है और भौतिक विद्या इस संसार से सम्बन्धित समस्त पदार्थो के ज्ञान से सम्बन्धित है। आज की सारी भौतिक उन्नति का ज्ञान बीजरूप में वेद में निहित है। विद्युत परमाणु यान आदि समस्त ज्ञान उनमें है। अनुसंधान की आवश्यकता है। आत्मा परमात्मा से सम्बन्धित ज्ञान में तो किसी को कोई सन्देह नहीं है। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका में नौका, विमान, तार विद्या का उल्लेख किया है। ऋ. 1/8/8/3,4,5,12, ऋ 1/3/4/2, ऋ1/2/21/10 आदि का उदाहरण दिया है।

जीवन से सम्बन्धित सारा ज्ञान वेदों में है–जीवन से सम्बन्धित सारा ज्ञान वेदों में मिलेगा। चिकित्सा, मुक्ति, पुनर्जन्म, प्रकृति, यज्ञ राजधर्म, वर्णाश्रम, धर्म, कर्म, उपासना, आरोग्य, ब्रह्मज्ञान आत्मा विषयक ज्ञान सब वेदो में मिलेगा। ऐसा कोई क्षेत्र नहीं है जिससे सम्बन्धित ज्ञान वेदों में न हो। आज मनुष्य आनन्द और शक्ति के लिए भटक रहा है। चारों और आतंक का वातावरण है। मनुष्य को अपने जीवन के बारे में पता नहीं है कि उसके जीवन का उद्देश्य क्या है? मानव जीवन क्यों मिला है? वह अमूल्य मानव जीवन व्यर्थ नष्ट कर रहा है। जब तक वह वेदों की शरण में नहीं आएगा तब तक उसे जीवन का वास्तविक बोध नही हो सकेगा। इसीलिए महर्षि दयानन्द सरस्वती ने वेदों की ओर लौटने का नारा दिया। विश्वशांति, वसुधैवकुटुम्बकम् का सन्देश वेद में मिलेगा। मनुर्भव अर्थात् मनुष्य बनो। ऐसा उच्च ज्ञान देने वाला वेद है। जीवन का यथार्थ बोध वेद ज्ञान से होता है। योग विद्या जीवन का अमृत स्रोत है जो वेद में मिलेगा। अपने आप को जानकर मनुष्य जीवन को सार्थक बना सकता है। जीवन के दिशा बोध के लिए वेद ज्ञान बूटी का काम करता है। वेदमंत्रों में तीन प्रकार के अर्थ हैं–वेद मंत्रों मे तीन प्रकार के अर्थ निहित है–

1. परोक्ष अर्थात् अप्रत्यक्ष 2. प्रत्यक्ष अर्थात् प्रसिद्ध 3. आध्यात्मिक अर्थात् जीव, परमेश्वर और सब पदार्थों के कार्य कारण प्रतिपादन करने वाले अर्थ। देखें ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका। कुछ वेद मंत्र ऐसे हैं जिनका परोक्ष अर्थ अभिव्यक्ति होता है। उदाहरणार्थ–

एकराट् अस्य भुवनस्य राजसि शचीयते इन्द्र विश्वाभिः अतिथिः।
माध्यं दिनस्य सवनस्य वृत्रहन् अनेद्य पिव सोमस्य वजिवः।। ऋ. 8/37/31

इस मंत्र में दोपहरी समय में सोम का पान करने का उपदेश है। वह दोपहरी का समय युवावस्था का प्रतीक है। सोम का अर्थ प्रभु के ध्यान का प्रतीक है। मनुष्य को उपदेश है कि वह परमात्मा का ध्यान युवाकाल में करे क्योंकि बचपन में उसका पूर्ण विकास नहीं करता और वृद्धावस्था में इन्द्रियाँ शिथिल हो जाती हैं। इसलिए प्रभु भक्ति, ध्यान का वास्विक काल युवावस्था

शेष अगले पृष्ठ पर

है। परमात्मा की ज्योति को, ज्ञान को, ध्यान को, श्रेष्ठ कार्य को युवाकाल में कर लेना चाहिये। इस मंत्र के द्वारा यह अप्रत्यक्ष अर्थ ध्वनित हो रहा है।

ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव यद्भद्रं तन्न आसुव।। यजु. 30/3

इस मंत्र में परमपिता परमात्मा से प्रार्थना की गई है कि वह हमारे समस्त दुर्गुण, दुर्व्यसन को दूर करे और कल्याणकारक गुण, धर्म, कर्म स्वभाव प्राप्त कराए। यह प्रार्थना से सम्बन्धित मंत्र है। मंत्र में बुराईयों से दूर रहने के लिए भगवान से प्रर्थाना करते रहने का सुन्दर उपदेश दिया गया है।

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते।

तयोरुपः पिप्पलस्वाद्वत्यनश्नन्नन्यो अभि चाकशीति।। ऋ 1/169/20

इस मंत्र में ईश्वर, जीव प्रकृति की सत्ता का उल्लेख है। तीन सत्ताओं के पृथक–पृथक होने का उपदेश है जो दो पक्षी और एक वृक्ष के द्वारा ध्वनित हो रहा है। पेड़ प्रकृति का अर्थ द्योतित कर रहा है। पेड़ पर बैठा फल खाने वाला पक्षी का अर्थ प्रकट कर रहा है और पेड़ पर बैठा फल न खाने वाला केवल देखने वाला पक्षी परमात्मा का अर्थ ध्वनित कर रहा है।

वेदों के मंत्रों में आलंकारिक वर्णन है–महर्षि दयानन्द सरस्वती ने ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका में अलंकारों का वर्णन किया है। उपमा, रूपक, श्लेष अलंकारों का उल्लेख करते हुए समझाया है कि वेद मंत्रों के भावों को समझने के लिए अलंकारों की जानकारी आवश्यक है। उन्हीं के शब्दों में "अदिति शब्द के बहुत अर्थ हैं। यथा–द्यौः अन्तरिक्ष, माता, पिता, पुत्र, विश्वेदेवा, पञ्चजना, जात ओर जनित्व।" उपमा और रूपक अलंकारों का स्वामी जी ने खूब उल्लेख किया है। जैसे–

पूर्णा दर्वि परा वत सुपूर्णा पुनरापत।

वस्नेव विक्रीणावहाऽदूषमूर्ज शतक्रतो।।

यजु 3/49

"इस मंत्र मे उपमा अलंकार है। जब मनुष्य लोग सुगन्ध्यादि पदार्थ अग्नि में हवन करते है तब वे ऊपर जाकर वायु, वृष्टि, जल को शुद्ध करते हुए पृथिवी को आते हैं।"

राजन्तमध्वराणां गोपामृतस्य दीदिवम्।

वर्द्धमानं स्वे दमे।। यजु. 3/23

"इस मंत्र में श्लेषालंकार है। परमेश्वर आदि रहित सत्यकारणरूप से सम्पूर्ण कार्यों को रचना और भौतिक अग्नि, जल की प्राप्ति के द्वारा सब व्यवहारों को सिद्ध करता है।"

रूपक अलंकार का बड़ा सुन्दर उदाहरण "द्वा सुपर्णा" मंत्र हैं। आत्मा रूपी पक्षी परमात्मा रूपी पक्षी, प्रकृति रूपी वृक्ष त्रैतवाद की सत्ता का दिग्दर्शन कराता है। ऐसे तमाम अलंकार वेद में भरे पड़े हैं। मानवीकरण अलंकारों की भरमार है। जड़ पदार्थों के सजीव वर्णन बड़े मनोहारी हैं।

वेदों की भाषा अपरिवर्तनशील है–पं. रघुनन्दन शर्मा ने "वैदिक सम्पत्ति" में इसका बड़ा सुन्दर वर्णन किया है कि "संसार की समस्त भाषाओं का परस्पर उसी प्रकार का सम्बन्ध है जिस तरह माता, पुत्री और बहिनों का होता है। समस्त भाषाओं के शब्दों के अनुशीलन और सूक्ष्म अवलोकन से ज्ञात होता है कि नवीन भाषाएँ विस्तृत वर्णमाला से सकुंचित वर्णमाला की ओर क्लिष्ट उच्चारणों से सरल उच्चारणों से सरल उच्चारणों की ओर दौड़ रही है। संसार की भाषाएँ जिस प्रकार विभक्तियुक्त भाषाओं से एकाक्षरी भाषाओं की ओर और संश्लेषणात्मकता से विश्लेषणात्मकता की ओर जा रही है उसी तरह क्लिष्ट और विस्तृत उच्चारणों से सरल और संकुचित उच्चारण की ओर भी जा रही हैं। यह सारा परिवर्तन वैदिक भाषा से–संस्कृत भाषा से ही हुआ है।" वास्तव में वेदों की वर्णमाला पूर्ण है। न कम है न ज्यादा। मर्यादित उच्चारण वाली भाषा वेद की है। वैदिक वर्णमाला और ब्राह्मी लिपि ने वेदों की भाषा को परिवर्तित होने से बचाया है। वैदिक भाषा को शुद्ध रखने के लिए वेदों को पढ़ने के जो अनेक क्रम बनाए गए हैं सबसे ज्यादा वे ही उसको ज्यों का त्यों बनाये रखने में समर्थ हुए हैं। देखें–वैदिक सम्पत्ति।

वेदज्ञान सबसे प्राचीन–वेद विश्व का प्राचीनतम ग्रन्थ है। इससे पुराना ग्रन्थ कोई नहीं है। इसकी उत्पत्ति सृष्टि की उत्पत्ति के साथ होती है। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में वेदों की उत्पत्ति का काल 1960852976 वर्ष लिखा है। उसमें यदि हम आज की तिथि 140 वर्ष और जोड़ दे तो इसका काल 1960853116 वर्ष होते हैं अर्थात् इतने वर्ष हुए वेदों की उत्पत्ति को! इतना पुराना ग्रन्थ विश्व का कोई भी ग्रन्थ नहीं है। परमपिता परमात्मा मानव की उत्पत्ति के साथ वेदों की उत्पत्ति करता है ताकि मनुष्य ज्ञान प्राप्त करके उन्नति करे। जीवन और जगत् की शिक्षा प्राप्त करे। उन्होंने वेद शब्द का अर्थ करते हुए लिखा है कि विद धातु ज्ञानार्थक है, सत्तार्थक है, लाभार्थक है और विचारात्मक है। इस दृष्टि से विचार करें तो वेद की सत्ता अर्थात् ज्ञान सदैव बना रहता है। वह परमात्मा के अन्दर विद्यमान रहता है। कभी नष्ट नहीं होता। इसीलिए वह मानव मात्र के कल्याण के लिए आदि सृष्टि में मनुष्य को वेद ज्ञान प्रदान कर देता है। अतः वेद का समय सृष्टि उत्पत्ति के समय का है।

वेदज्ञान चार ऋषियों को क्यों और कैसे मिला?–यह एक वैज्ञानिक प्रश्न है। जब परमात्मा निराकार है तब वह शरीरधारी ऋषियों को वेदज्ञान प्रदान कैसे मिला। वास्तव मे परमात्मा आत्मा के अन्दर भी व्याप्त है। उसे बाहर से कुछ बोलने की आवश्यकता नहीं है। आत्मा के अन्दर व्याप्त परमात्मा आत्मा को प्रेरित कर देता है। उस प्रेरणा को पाकर जीवात्मा उस ज्ञान को प्राप्त करता है। महर्षि दयानन्द सरस्वती सत्यार्थ प्रकाश के नवमसमुल्लास में लिखते हैं–"जब इन्द्रियाँ अर्थों में मन इन्द्रियों और आत्मा मन के साथ संयुक्त होकर प्राणों को प्रेरणा करके अच्छे व बुरे कर्मों में लगाता है तभी वह बहिर्मुख हो जाता है। उसी समय भीतर से आनन्द, उत्साह, निर्भयता और बुरे कर्मों में भय, शंका, लज्जा उत्पन्न होती है। वह अन्तर्यामी परमात्मा की शिक्षा है।" आनन्द, उत्साह, निर्भयता, की शिक्षा आत्मा में परमात्मा अन्दर ही प्रेरित करता है। उस शिक्षा को आत्मा अनुभव करता है। ठीक उसी प्रकार अन्दर ही परमात्मा वेद के ज्ञान को आत्मा को प्रेरित कर देता है। अग्नि, वायु, आदित्य, अंगिरा की आत्मा सर्वोत्कृष्ट होने के कारण परमात्मा ने उन्हें वेद ज्ञान प्रेरणा से प्रदान किया। हम इस चीज को अपने भी जीवन में अनुभव कर सकते हैं। परमात्मा की प्रेरणा को जान सकते हैं।

वेदों की विचारधारा से ही विश्व का कल्याण–वेद में मानव कल्याण की शिक्षा भरी पड़ी है। पर्यावरण, चिकित्सा, शिक्षा नैतिकता, धर्म, कर्म राजनीति, देश प्रेम, विश्व प्रेम, मानवता, शांति, मोक्ष, आत्मा, परमात्मा, प्रकृति भौतिक उन्नति, आध्यात्मिक उन्नति, एकता सौहार्द, विश्वबन्धुत्व समानता आदि हर विषय का बीज वेदों में मिलेगा। "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" जैसी उदात्त भावना वेदों के अलावा और कहीं नहीं मिलेगी। स्वार्थ, घृणा, ईर्ष्या, द्वेष, कटुता, वैमनस्य, वैर, हिंसा, भय, उत्पीड़न, जैसी अनेकशः घृणित भावनाएँ विश्व में अशांति पैदा कर रही हैं। वास्तव में वेद मानव को मानव बनाकर धरती को स्वर्ग बनाने का संदेश देता है। जब तक मनुष्य वेद की शिक्षा को आत्मसात नहीं करेगा तब तक उसका कल्याण नहीं होगा। वेद ही सार्वभौमिक है। पूरे विश्व के लोग एक परमात्मा की संतान है फिर मानव मानव में भेदभाव क्यों? वेद "मनुर्भव" का संदेश देता है।

वेद में हर प्रकार की शिक्षा निहित है?–वेद में गृहस्थाश्रम, सामाजिक व्यवहार, सदाचार, विवाह गर्भाधानादि संस्कार, जीविका, उद्योग, ज्ञान–विज्ञान, समाज, साम्राज्य की रक्षा, वैदिक, उपनिषद, धर्म, काम मोक्ष, सृष्टि आदि से संबंधित सब प्रकार की शिक्षाएँ भरी पड़ी हैं। देखिए वैदिक सम्पत्ति उदाहरणार्थ एक वेदमंत्र देखें–

उलूकयातुं शुशुलूकयातुं जहि श्वयातुमुत कोकयातुम्।

सुपर्णयातुमुत गध्रयातुं दृषदेव प्र मृण रक्ष इन्द्र।। ऋ. 7/104/22

अर्थात् "गरुड़ के समान मद (घमंड), गिद्ध के समान लोभ, कोक (चिड़ा) के समान काम, कुत्ते के समान मत्सर, उलूक के समान मोह (मूर्खता) और भेड़िये के समान क्रोध को मार भगाइए। अर्थात् काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर आदि छह विकारों को अपने अन्तःकरण से हटा दीजिए।" इस शिक्षा से पूरा जीवन बदल सकता है। मनुष्य इन दुष्प्रवृत्तियों में फँसकर नाना प्रकार के कष्ट भोगता है। घमंडी मत बनो। लोभी मत बनो। अन्धकामी मत बनो। ईर्ष्यालु मत बनो। क्रोधी मत बनो। अज्ञानी मत बनो। वेद की शरण में सारे कल्मष दूर हो जाते हैं क्योंकि मनुष्य को सत्यपथ मिल जाता है।

आर्य समाज का सिद्धान्त वेद पर आधारित है–आर्य समाज वेदाधारित संस्था है। यह वेदों का प्रचार–प्रसार करता है। वेदानुकूल बात की ही मान्यता है। वेद विरुद्ध बातों का खंडन करता है। वेदों की ओर लौटने का नारा देता है। वेदों का डंका बजाता है। वेद की ज्योति जलाता है। वेद का अवलम्बन लेकर चलता है। वेद के पठन–पाठन पर बल देता है। जब तक मनुष्य वेदों की शिक्षाओं को नहीं लेगा तब तक उसका कल्याण नहीं होगा क्योंकि वेदोऽखिलो धर्ममूलम्। वेद ही सारे धर्मों का मूल है। वेद से परे कुछ नहीं है

आर्य समाज रावतभाटा (कोटा) राज.

कुछ सवाल–जवाब (चौथी किश्त)

● अभिमन्यु कुमार खुल्लर

"कुछ सवाल–जवाब" की तीन किश्त लिख चुका हूँ। पत्र–पत्रिकाएँ उन्हें अपनी–अपनी सुविधानुसार प्रकाशित कर रही हैं। जिन आत्मीयजन एवं विद्वानों को उन्हें देखने का अवसर मिला है, उन्होंने दूरभाष पर साधुवाद दिए हैं। पाठकों को प्रश्नोत्तर शैली बोधगम्य और चुम्बकीय लगी। विद्यार्थी जीवन के एक सहपाठी अशोक 'नादान' (कवि, गीतकार, संगीतज्ञ) ने तो आल्हादित होकर अपने जीवन के पाँच वर्ष दे दिए हैं। मैने कहा–मेरे स्वस्थ होने की कामना कर।

'कुछ सवाल–जवाब' शृंखला इसलिए पसन्द की जा रही है कि सवाल करने वाली जीवात्मा, दो टूक भाषा में, सीधे परमात्मा से ही सवाल कर रही है और परमात्मा भी पूर्व प्रदत्त वेदज्ञान को आर्यभाषा (हिन्दी) में ही समझा कर महर्षि दयानन्द को अनन्त काल के लिए प्रासंगिक बनाए रखना चाहता है। महर्षि ने प्रगाढ़ समाधि अवस्था में रहकर, उस वेदज्ञान को जो परमात्मा ने आदित्य, अंगिरा, अग्नि और वायु महर्षियों को अपनी भाषा (संस्कृत) में दिया था, उस ज्ञान को महर्षि दयानन्द ने कुल 59 वर्ष की आयु के सक्रिय भाग, लगभग 15 वर्ष में यजुर्वेद भाष्य, ऋग्वेद भाष्य व अन्य अनेक ग्रंथों का प्रणयन कर, प्रवचन व शंका समाधान कर जनसाधारण को आर्यभाषा (हिन्दी) में उपलब्ध कराया, नित्यत्व प्रदान किया। महर्षि की मातृभाषा गुजराती थी, अध्ययन व प्रवचन की भाषा भी काफी संस्कृत ही रही। जनसाधारण तक पहुँचने के लिए हिन्दी भाषा को जन्म दिया, उसे संवारा अन्यथा यह अल्पज्ञ ही नहीं करोड़ों जन वेदज्ञान से वंचित रह जाते। अस्तु....

सवाल–जवाब प्रारम्भ करने की अनुमति चाहता हूँ।

अनुमति है, शुरु करो।

प्रश्न 1. लगभग पाँच वर्ष से वेदोक्त कर्मफल सिद्धान्त और उसके अन्तर्निहित जन्म–मरण चक्र को समझने का प्रयास कर रहा हूँ पर पूरी समझ नहीं पा रहा हूँ और जो समझा है, उसे आत्मसात नहीं कर पा रहा हूँ।

उत्तर – क्यों नहीं समझ पाए?

प्रश्न 2. संस्कृत भाषा का ज्ञान नहीं है, इसलिए वेदों का स्वाध्याय नहीं किया है। गुरुकुल में पढ़कर विद्यालंकार और वेदालंकार की उपाधि भी प्राप्त नहीं की है और न कहीं महाविद्यालयों में अध्यापन कार्य किया है। सिर्फ बी.ए. की डिग्री, वह भी अपने अपराध के कारण तीसरी श्रेणी में प्राप्त कर केन्द्र के महालेखाकार कार्यालय म.प्र. ग्वालियर में, शासन की सेवा की। पत्नी भी सौभाग्य से शासकीय सेवा में कार्यरत मिली। फलस्वरूप हम दोनों ने माता–पिता की तन–मन–धन से सेवा कर उनका और आपका आशीर्वाद प्राप्त किया।

उत्तर – माता–पिता की सेवा से उनका और आपका आशीर्वाद प्राप्त होता है, यह बुद्धि कैसी मिली?

प्रश्न 3. आपने ही तो कहा है–मातृमान, पितृमान, आचार्यमान पुरुषो वेदः। तीनों ही पूजनीय हैं, ऐसा भाव रखकर, सेवा करने से तहे दिल से, हृदय के कोने–कोने से आशीर्वाद बरसेगा। यह ज्ञान लाखों वर्षों से आर्य संस्कृति का अंग बना हुआ है।

उत्तर – ठीक है। आगे बढ़ो। मूल प्रश्न पर आओ।

प्रश्न 4. कर्मफल सिद्धान्त बड़ा काम्प्लीकेटेड–उलझन भरा, प्रश्न है। मेरे लिए अनसुलझी पहेली है।

उत्तर– वह तो रहेगी क्योंकि तुम्हें संस्कृत आती नहीं, वेद तुमने पढ़े ही नहीं।

प्रश्न 5. यह तो मैं पूर्व में ही स्वीकार कर चुका हूँ। बार–बार लात मारने से क्या होगा?

उत्तर – महर्षि दयानन्द को पढ़कर भी नहीं समझ पाए?

प्रश्न 6. नहीं; क्योंकि अगाध मेधा, बुद्धि का विख्यात पंडित गुरुदत्त विद्यार्थी जिसे अंग्रेजी व संस्कृत का चूणान्त ज्ञान प्राप्त था और हिन्दी सहित तीनों भाषाओं में, भाषणों से, लेखन से अपने विचारों को अभिव्यक्ति दे सकता था, वही जब सत्रह बार मनोयोगपूर्वक अध्ययन कर 'सत्यार्थ प्रकाश' का सम्पूर्ण ज्ञान आत्मसात नहीं कर पाया तो मैं कहाँ लगता हूँ!

उत्तर – अच्छा, बताओ कि क्या तुम्हें पूर्ण विश्वास हो गया है कि मैं परमात्मा, निराकार, सर्वव्यापक और न्यायकारी हूँ।

प्रश्न 7. लगता है, समझ में आ गया है पर सच कहूँ तो विश्वास की अंतिम सीमा तक नहीं।

उत्तर – क्यों?

प्रश्न 8. 'विश्वास' किसी भी परिस्थिति में न डगमगाए उसे ही तो 'विश्वास' कहेंगे।

उत्तर – हाँ, बिलकुल ठीक कहा तुमने।

प्रश्न 9. अभी तक यानी 78 वर्ष की आयु तक ऐसी परिस्थिति ही नहीं आई जिसमें विश्वास जड़ से हिल गया हो। दुःख जन्य पीड़ा अवश्य हुई।

उत्तर – ज़रा स्पष्ट करो।

प्रश्न 10. जड़ से मृत्यु ही हिला सकती है। माता–पिता, दो बहनें, दो बहनोई, एक सबसे बड़े भाई के स्वर्गवास होने पर आघात लगा पर ऐसा आघात नहीं कि पूरा जीवन ही हिल जाए। इन सबका महाप्रयाण तो आपकी जीवन–मरण व्यवस्था का स्वाभाविक परिणाम था। ये सब पकी आयु में ही गए।

उत्तर – फिर समस्या क्या है?

प्रश्न 11. प्रभु! वैदिक धर्म में दो पीढ़ियों से आस्था रखने वाले, आर्यसमाज व वैदिक धर्म के प्रचार–प्रसार में संलग्न संस्थाओं में धन वर्षा करने वाले परिवार के तीन युवकों को 20 से 25 वर्ष की आयु में मौत निगल ले गई। इस परिवार की आपकी न्याय व्यवस्था व कर्मफल सिद्धान्त में आस्था पूर्णतया ध्वस्त हो गई है। सम्पूर्ण परिवार व आत्मीयजन निराशा के गहन गर्त से उबर नहीं पा रहे हैं। आजीवन–नहीं, नहीं, सरल स्पष्ट भाषा में कहें तो मरने तक भी उनके जख्म नहीं भर पाएंगे। वर्षों से अर्जित ज्ञान, दसियों वर्ष में सुने–उपदेश–प्रवचन एक झटके में विस्मरित हो गए। ये जीवात्माएँ दर–दर पर सर पटकने को मज़बूर हैं।

उत्तर – वैदिक ज्ञान में कमी–न्यूनता के कारण यह परिवार भयंकर मानसिक आघात नहीं झेल रहा है। इस ज्ञान को संन्यासियों और विद्वानों ने मानसिक धरातल पर ही परिपुष्ट किया है और शाब्दिक जाल बना कर परोसा है। इसलिए श्रोताओं और पाठकों पर इनके प्रवचनों या लेखन का असर नहीं होता। गुरु निवास छोड़ने के पश्चात् लम्बे समय तक महर्षि दयानन्द स्वयं इस समस्या से जूझते रहे। सर्वप्रथम आगरा, ग्वालियर फिर जयपुर आदि के भ्रमण में, प्रवचनों में, इस प्रभाव की कमी उन्हें खली और वे निरन्तर गुरु विरजानन्द जी महाराज के पास, विचार–विमर्श के लिए जाते रहे।

दूसरे, ये लोग ऐसी सामाजिक संरचनाएँ स्थापित नहीं कर पाए जो मानव जीवन में आने–वाले घात–प्रतिघातों को सहनीय बना देती। महर्षि दयानन्द ने आश्रम व्यवस्था का समर्थन ही इसलिए किया था कि व्यक्तिगत सुख–दुःख की सीमा से हटकर, व्यक्ति, समष्टिगत सुख–दुःख में अपने को डुबा दे। इस व्यवस्था को सफलता नहीं मिली। आज भी आश्रम व्यवस्था के परिवर्तित रूप में जो व्यक्ति सामाजिक सरोकार वाले प्रकल्पों से जुड़े हैं, उनके मानसिक क्षितिज का विस्तार हुआ है। उन्हें दूसरों के विकराल दुःखों का भार सहनीय लगता है। एक व्यक्ति रोज प्रातः गुलाब का फूल लेकर कैंसर वार्ड में जाता है, मरीज का कुशल क्षेम पूछता है और गुलाब का फूल देकर दूसरे मरीज के पास बढ़ जाता है।

सामाजिक व्यवस्थाएँ पैदा करना जीवात्मा का काम है, मेरा नहीं। तुम कर्मफल सिद्धान्त, जीवन–मरण के बारे में प्रश्न करना चाहते थे, वही करो।

प्रश्न 12. निम्नांकित प्रश्नों के उत्तर जानना चाहता हूँ–

1. आपकी व्यवस्था में पाप–पुण्य कर्मों के बराबर होने पर ही मानव चोला दिया जाता है। फिर उत्तम, मध्यम, निम्न स्तरीय मानवों का वर्गीकरण, पाप–पुण्य की न्यूनता या अधिकता के आधार पर किया जाना बेमानी–अर्थहीन लगता है। मानव की जो आर्थिक–सामाजिक स्थिति है उसके औचित्य को सिद्ध करने का षड़यंत्र मुझे लगता है। यह स्थिति भारत ही नहीं विश्व के समस्त मानवों की है।

2. एक बार मानव जीवन मिलने पर, कर्मफल व्यवस्था के पालन में वह जीवन–मरण के चक्र में पड़ता है इसीलिए जीवात्मा को प्रवाह से अनादि मानते हैं। केवल मोक्ष अवस्था में ही जीव और आत्मा का पृथक्करण होता है, अन्यथा नहीं। यह स्थिति सृष्टि उत्पत्ति से लेकर प्रलय काल तक चलती है।

3. मृत्यु होने पर–प्राण वायु निकलने पर आत्मा के साथ सूक्ष्म शरीर जिसमें पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ–श्रोत्र, चक्षु, घ्राण, रसना और स्पर्श तथा पाँच कर्मेन्द्रियाँ–हाथ, पैर, वाणी, गुदा और उपस्थ तथा पाँच तन्मात्राएँ–शब्द, रूप, रस, गंध और स्पर्श तथा बुद्धि और मन ये सत्रह तत्व भी जाते हैं। और संचित कर्म भी, ऐसा विद्वानों का अभिमत है। ये तत्व–कर्मयोनि और भोग योनि का प्राणी होने से मानव शरीर में ही जा सकते हैं। इनके होते हुए जीवात्मा का ट्रांसफर पेड़–पौधों, पशु–पक्षियों में नहीं हो सकता।

4. आपकी सृष्टि रचना ऋत नियमों से बंधी है। आप भी इन नियमों से बंधे है। प्रायः प्रवचन कार उदाहरण देते हैं कि आप दूसरा ईश्वर नहीं बना सकते। इसी प्रकार बिना सूत्रों का परिवर्तन किए मानवीय जीवात्मा का स्थानांतरण पशु–पक्षी, पेड़–पौधों में नहीं किया जा सकता है। कर्मफल व्यवस्था के नाम पर भी नहीं। मानवीय जीवन में ही इतने दारुण, वीभत्स अकल्पित दण्ड पाए व्यक्ति मिल जाते हैं, क्या उनसे भी दारुण कष्ट भोग योनि में भेजे जाने पर हो सकता है? मेरे लिए मानना नामुमकिन है। यह आपकी व्यवस्था नहीं हो सकती। शास्त्रकारों का भाष्य दोषपूर्ण है या वे आपके मन्तव्य को समझ ही नहीं पाए।

अब जरा जन्म–मरण की चर्चा की जाए। पहले जन्म की करते हैं–

नर और नारी दोनों चेतन हैं, दोनों जीवात्मा हैं। प्राण–वायु के निकलने पर या मृत्यु होने पर दोनों की जीवात्मा, सूक्ष्म–शरीर और संचित कर्म सहित दूसरे जन्म की खोज में निकल जाती हैं।

नर–नारी के संयोग से जीव जन्म लेता है। नर के वीर्य में करोड़ों शुक्राणु जिनमें आत्मा मानी जाती है, नष्ट हो जाते हैं। वैसे ही प्रत्येक शुक्राणु जीवन धारण कराने में समर्थ होता है। जीव वैज्ञानिकों ने टेस्टट्यूब बेबी उत्पन्न करके यह सिद्ध कर दिया है। पुरुष के शुक्राणु में आत्मा और नारी को बीजारोपण हेतु क्षेत्र (खेत) मानना बुद्धिसंगत प्रतीत नहीं होता।

नर के शुक्राणु में x और y क्रोमोसोम गुण सूत्र होते हैं और नारी के डिम्बाणु में केवल x क्रोमोसोम होता है। फ्यूजन के समय यदि पुरुष शुक्राणु का x क्रोमोसोम से संयोग करता है तो पुत्र का जन्म होता है। इस स्थिति में किसके कर्मफलों का भोग नवीन

शेष पृष्ठ 09 पर

कब तक पहली कक्षा में पड़े रहोगे?

● डॉ. सुरेन्द्र कुमार शर्मा

माधो लाल जी की पोती का नाम है –चुनमुन। वह पहली कक्षा में पढ़ती है। उन्होंने अपनी पोती से पूछा, ''पहली कक्षा के बाद कौन सी कक्षा में जाओगी?'' उसने उत्तर दिया, ''पहली कक्षा में ही आऊँगी।'' तब माधोलाल जी ने कहा, ''नहीं बेटे, पहली कक्षा के बाद दूसरी कक्षा में जाते हैं।'' तब चुनमुन ने कहा, ''मैं तो पहली कक्षा में ही पढ़ूँगी।'' ''ऐसा क्यों?'' माधोलाल जी ने आश्चर्य चकित होकर चुनमुन से पूछा। तब चुनमुन ने कहा, ''दादा जी, पहली कक्षा में पढ़ना नहीं पड़ता। बस खिलौनों से खेलते हैं, खाने के लिए टॉफी मिलती है। दूसरी कक्षा में यह सब नहीं मिलेगा। इसलिए मैं अगले साल भी पहली कक्षा में ही रहूँगी।'' यह तो भौतिक जगत् की बात।

आइए, अब बात करते हैं–आध्यात्मिक जगत् की। इस जगत् में अन्नमय कोष या स्थूल शरीर ही पहली कक्षा है और जीव है चुनमुन। जिस प्रकार भौतिक जगत् में चुनमुन पहली कक्षा से दूसरी कक्षा में नहीं जाना चाहती, क्योंकि उसे पहली कक्षा में जो सुख मिल रहे हैं वे दूसरी कक्षा में नहीं मिलेंगे उसी प्रकार अन्नमय कोन या स्थूल शरीर के सुखों का आनंद लेने वाला जीव प्राणमय कोष या सूक्ष्म शरीर रूपी दूसरी कक्षा में नहीं जाना चाहता। इसका कारण यह है कि सांसारिक सुख केवल अन्नमय कोष या स्थूल शरीर से ही भोगे जा सकते हैं। स्थूल शरीर की रक्षा के लिए साधना की नहीं, अन्न की आवश्यकता होती है परंतु सूक्ष्म शरीर की सार्थकता के लिए साधना तथा वैराग्य की आवश्यकता होती है। संसार में जितने भी प्राणी हैं केवल कुछ साधक–विरक्त व्यक्तियों को छोड़ कर सभी स्थूल शरीर की पहली कक्षा में पड़े रहने से अधिक सुख की प्राप्ति करते हैं।

प्रत्येक कक्षा का पाठ्यक्रम (स्लेबस) होता है। पहली कक्षा अर्थात् स्थूल शरीर का पाठ्यक्रम है–

आहार निद्रा भय मैथूनं च सामान्यमेतत् पशुभिर्नराणाम्। अर्थात् आहार, निद्रा, भय और मैथून ये चारों बातें मनुष्यों में भी होती हैं और पशुओं में भी। यह पाठ्यक्रम चिन्तनहीन मनुष्यों तथा पशुओं पर लागू होता है। यदि आजकल के भौतिकतावादी समाज पर दृष्टि डालें तो चाहे नेता हों या अभिनेता, डॉक्टर हों या वैरिस्टर, व्यापारी हों या अध्यापक बी.ए. हों या एम.ए. सभी स्थूल शारीरिक सुख की पहली कक्षा से आगे नहीं बढ़ना चाहते। भौतिक क्षेत्र में पी.एच.डी. करने वाला आध्यात्मिक क्षेत्र की पहली कक्षा भी उत्तीर्ण नहीं कर पाता, आश्चर्य है।

आइए, अब विचार करते हैं दूसरी कक्षा (अध्यात्मिकता) के पाठ्यक्रम पर। पहली कक्षा में हमने पढ़ा था, 'ई' से ईख पर दूसरी कक्षा में पढ़ना होगा, 'ई' से ईश्वर। पहली कक्षा में हमने पढ़ा था–'ओ' से ओखली परंतु अब पढ़ना होगा–'ओ' से ओ३म्। अब 'त' से तकली सीखने के बजाय हमें 'त' से तपस्वी बनने का संकल्प लें। पहली कक्षा का पाठ्यक्रम था–'**आहार निद्रा भय मैथूनं च सामान्यमेतत् पशुर्निनराणाम्।**' पर अब दूसरी कक्षा का पाठ्यक्रम है उक्त श्लोक का दूसरा भाग–

धर्मो हि तेषां अधिको विशेषो धर्मेण हीनः पशुभिः समानः।''

दूसरी कक्षा में धर्म को महत्व दिया गया है। धर्म ही मनुष्यत्व एवं देवत्व की भेदक रेखा है। जहाँ आध्यात्मिक चिन्तन एवं परमार्थ भाव है वहाँ देवत्व है, और जहाँ केवल भौतिकता और स्वार्थपरता है वहाँ असुरत्व है। जहाँ इन दोनों का सम्मिश्रण है वहाँ मनुष्यत्व है। धर्म का क्षेत्र अत्यंत व्यापक है। जिसको धारण किया जाए, उसे धर्म कहते हैं–धारणाद् धर्म इत्याहुः धर्मो धारयते प्रजाम्।'' धर्म बाहरी आवरण नहीं है। यह तो आन्तरिक गुणों की अभिव्यक्ति है। दया, करूणा, ममता, दान आदि भाव धर्म के अंतर्गत समाहित हो जाते हैं।

भौतिक धरातल पर प्राईमरी में पढ़ने वाले बच्चे से पूछें कि कितना पढ़ना चाहते हो तो वह बी.ए., एम.ए. से नीचे की बात नहीं कहेगा। इसी प्रकार किसी साधक से पूछें कि तुम्हारी साधना का उद्देश्य क्या है तो वह स्वर्ग या मोक्ष से नीचे की बात नहीं कहेगा। जबकि प्राइमरी कक्षा वाला प्राइमरी से आगे नहीं बढ़ पाता और स्वर्ग तथा मोक्ष की कामना करने वाला अन्नमय कोष या स्थूल शरीर की पहली कक्षा को भी पार नहीं कर पाता है। कितनी विचित्र बात है हम वैज्ञानिक यंत्रों की जानकारी प्राप्त कर लेते हैं, अंतरिक के रहस्यों को जान लेते हैं, समुद्र की गहराई को नाप लेते हैं लेकिन नहीं जान पाते तो अपने ही शरीर में लिप्त अपनी ही आत्मा को। इसलिए हमारे उपनिषद हमें संदेश देते हुए कहते हैं–'आत्मानं विद्धि' अर्थात् आत्मा को जानो, पहचानो।

आपको और हमको शर्म आएगी, लगातार पहली कक्षा में पड़े रहने के कारण। एक ही कक्षा के विद्यार्थी होने के कारण हम नाना योनियों में भटक रहे हैं। कभी तो यह भटकाव बंद होना चाहिए। आइए, दूसरी कक्षा में एडमिशन लें। दूसरी कक्षा का पाठ्यक्रम है–तप, साधना, वैराग्य, दया, करूणा आदि। इस पाठ्यक्रम में उत्तीर्ण होने पर फिर आपको किसी कक्षा में एडमिशन नहीं लेना पड़ेगा।

230, आर्य वानप्रस्थ आश्रम, ज्वालापुर
हरिद्वार
मोबाईल नं. 9639149995

☞ पृष्ठ 08 का शेष

कुछ सवाल–जवाब...

जीवन धारण करने वाली जीवात्मा करती है–

क्या केवल पुरुष के?

क्या केवल नारी के?

या संयुक्त रूप से दोनों के? इस विषय में वेद क्या कहता है?

इसी सन्दर्भ के अन्तर्गत गर्भधारण की सर्वज्ञात विकृतियों की ओर ध्यान दिला कर जानना चाहता हूँ कि ये विकृतियाँ जब आपके विधान में हो नहीं सकती तो उसका क्या कारण है?

1. स्वस्थ माता–पिता की संतान भी मंगोल (अविकसित मस्तिष्क) पायी जाती है।

2. अनेक बार स्वस्थ नारी का गर्भपात,

3. अत्यन्त अल्पायु में मृत्यु,

4. विकलांग सन्तान,

5. दो या अनेक शुक्राणु का दो या अधिक डिम्बाणु के भेदन से एक से अधिक सन्तान,

6. एक ही शुक्राणु का एक ही अण्डाणु के विभाजन से जुड़वा–यानी एक ही शरीर में दो सिर–एक धड़।

ये सब डिफेक्टिव प्रोडक्शन आपकी फैक्टरी का है?

इस प्रसंग में जनसंख्या वृद्धि का उल्लेख भी समीचीन रहेगा। महर्षि दयानन्द के समय भारत की जनसंख्या लगभग 20 करोड़ थी, जो अब 130 करोड़ हो गई है। विश्व की जनसंख्या 700 करोड़ है और सन् 2050 तक 950 करोड़ हो जाने के अनुमान से विश्व के समाजशास्त्रियों की नींद हराम हो गई है। संसाधनों की कमी, विश्व में भयानक अराजकता फैला देगी। लूटपाट, हत्या, डकैती, खून–खराबे का व्यापक स्तर पर फैलाव हो जाएगा। जनसंख्या विस्फोट और उसके संभावित परिणाम क्या कर्मफल सिद्धान्त की प्रासंगिकता में प्रश्न चिन्हन नहीं लगा देंगे?

जन्म की चर्चा के लिए इतना ही पर्याप्त है अब 'मरण' की चर्चा की जाए–

पौराणिकों के गरुड़ पुराण में अनेक नरकों में भेजे जाने का उल्लेख है। इस्लाम भी पापियों को दोजख़ में भेजे जाने का उल्लेख करता है। मैं जानना चाहता हूँ कि हमारा–वैदिक धर्मियों का न्यायकारी ईश्वर भी मनुष्य शरीर में ही पाई जाने वाली यातना से क्या अधिक यातना दे सकता है? इतनी यातनाओं की तुलना में भोग योनि–पशु–पक्षी, पेड़–पौधों में भेजा जाना किसी भी सूरत में कष्ट वाला नहीं माना जा सकता–

1. बलात्कार के अनेक मामलों में बलात्कारियों ने पीड़ित महिलाओं जिनमें तीन–चार वर्ष की अबोध बच्चियों से लेकर 90 वर्ष तक की महिलाएँ हैं के योनि द्वार में, लोहे की छड़ बन्दूक की नाल डालकर भीषणतम यातना पहुँचाई।

2. दुनिया भर में करोड़ों व्यक्ति नारकीय जीवन जी रहे हैं। मुम्बई में, मैं उस जगह भी गया हूँ जहाँ हजारों की संख्या में नारियाँ, टाट के छाजनों में, देह व्यापार में धकेल दी गई है और उस नारकीय जीवन की जो उन्हें घृणित रोग देता हैं। वे भी प्रत्येक संध्या को 'ईश प्रार्थना' कर अधिक 'ग्राहक' भेजने की याचना करती हैं। विश्वभर के नारी–बाजारों का यही परिदृश्य है।

3. जर्मनी के तानाशाह हिटलर ने 50–60 लाख नाज़ियों पर इतने जुल्म, इस प्रकार के जुल्म ढाए कि उनका उपलब्ध विवरण भी पढ़ पाना कड़े दिल का काम है। मैंने दो बार की अमेरिका यात्रा में पढ़ने की कोशिश की पर पुस्तक पूरी नहीं पढ़ पाया।

लाइन में खड़ा करके गोलियों से उड़ाना, यातना गृह में बच्चियों, महिलाओं, और पुरुषों को जो भूख–प्यास से पूर्णतया जर्जर हो चके थे, उनके सब कपड़े उतरवाकर गैस चैम्बरों में धकेल देना, क्या कम पीड़ादायक रहा होगा। आज भी, मध्यपूर्व के देशों में, इराक, सीरिया और अन्य मुस्लिम देशों में यही सब कुछ हो रहा है।

4. कैंसर, चिकनगुनियाँ, जीका वायरस से मौत क्या कम कष्टदायक है। टर्मिनल स्टेज में कैंसर रोगी को पैथेडीन (अफीम) की इतनी अधिक मात्रा दी जाती है कि उसे पीड़ा का होश भी नहीं रहे। इसी अवस्था में उनकी मृत्यु हो जाती है। ऐसी मृत्यु मैंने देखी है।

5. विश्वभर में प्रत्येक वर्ष प्रकृति की विनाशलीला यथा सुनामी, केदारनाथ त्रासदी आदि में हजारों मानव काल के करालगाल में समा जाते हैं। क्या ये मृत्यु भी आपकी न्याय व्यवस्था के अन्तर्गत कर्मफल सिद्धान्त की पुष्टि में मान्य की जा सकती हैं? जानना चाहता हूँ।

प्रभु! आप न्यायकारी हो, नचिकेता के समान इन सभी प्रश्नों का निराकरण आपसे चाहता हूँ। कृपा करो।

उत्तर – वत्स! पहले अपने भारत के विद्वानों एवं संन्यासियों के पास जाओ जिन्होंने चारों वेदों का, छः ब्राह्मणग्रंथों का दर्शन, ग्यारह मान्य उपनिषदों का अध्ययन किया है।

तथास्तु।

22, नगर निगम क्वार्टर्स,
जीवाजीगंज, लश्कर,
ग्वालियर– 474001 (म.प्र.)
दूरभाष : 0751–2425931

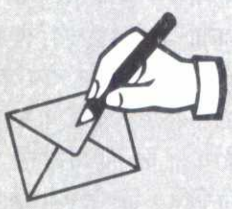

पत्र/कविता

ज्ञान कर्म भक्ति मिलें तभी योग कहलाय

खुद को जो जाने नहीं, वह नकली इंसान।
जाने अपने आप को, सच्चा उसको जान।।
अपना स्वामी आप हैं, उसे रथी लो जान।
हो लगाम गर हाथ में, मंजिल पक्की मान।।
दुर्जन को नित दीखता, चंदा में भी दाग।
दीखत है गुणवान को, लकड़ी में भी आग।।
देखे थाली और की, जो बैठा ललचाय।
भूले अपने रूप को, पाछे वो पछताय।।
कूड़ा गर मन में भरा, सद्गुण कैसे आय।
पहले मन को साफ कर, समझ तभी कुछ पाय।।
ज्ञान पूर्वक कर्म हो, भक्ति वही बन जाय।
ज्ञान कर्म भक्ति मिलें, तभी योग कहलाय।।
कोमल जल की धार से, टूटें सब चट्टान।
ज्युं योग अभ्यास से, मूर्ख पावें ज्ञान।।
बालक का कोमल हिया, छल कपटों से दूर।
दुनिया उसे सिखाय दे, छल कपट भरपूर।।
जितना तेरे पास है, कर उतना स्वीकार।
जिसकी तुझको आस है, मत करना तकरार।।
जनम लेते ही कोई, बनता नहीं महान।
कष्ट ताप दे ईश ही, बनाय उसे महान।।

नरेन्द्र आहूजा 'विवेक'
पंचकूला

'आर्य जगत्' को इतने अधिक लोग पढ़ते हैं?

सदा सत्य–पथ पर चलने और चलाते रहने वाले अपने आर्यसमाजी बंधुओं के बीच में ही आर्य–विचारों के प्रचार करने को मैं दिन में टार्च जलाने जैसा अनावश्यक मानता हूँ। इसीलिए मैं अंधेरी गुफाओं में छुपे–चिपके हुए सिंह, भालू, गीदड़, चमगादड़, के बीच ही वैदिक सूर्य के प्रकाश को अपने आइने से यथा संभव प्रतिबिंबित करते रहने की कोशिश में लगा रहता हूँ।

देश की आजादी हेतु जिस तरह आजाद, भगत, बिस्मिल्लादि वीरगण तो स्वदेश के अंदर से लगे हुए ही थे, इसी स्वातंत्र्य–समर–यज्ञ को वीर उधम सिंह, मदन लाल, रासबिहारी, नेताजी सुभाष चंद्र बोस आदि वीर गण देश के बाहर से कर रहे थे। उसी तरह वेद–प्रचार सिर्फ आर्यसमाज के अंदर से ही नहीं, बल्कि बाहर से भी हो, इसीलिए मैं भी आर्येतर पत्र–पत्रिकाओं में ही ज्यादा लिखना पसंद करता हूँ। किंतु जब अपने आर्य बंधुओं से ही कोई निवेदन या शिकायत करना हो, तो आर्य–पत्रों का ही सहारा लेना पड़ता है। इसी क्रम में मैं 'आर्यजगत्' में भी अपना कुछ–कुछ विचार रखने लगा। किंतु इसमें छपे हमारे हर लेख पर देश के कई भागों से हर वर्ग के प्रबुद्ध जनों के समर्थन व विरोध की इतनी प्रतिक्रियायें मिलने लगी, तो मुझे ताज्जुब होने लगा कि 'आर्य जगत्' को इतने अधिक लोग पढ़ते हैं? मैं नहीं जानता था कि पौराणिक– नेता भी आर्य जगत् को ही प्रमुखता देते होंगे और मुझसे पूछने भी लगेंगे कि मंदिर का पुजारी होकर भी आप आर्य समाजियों–स्व स्वधर्म (पाखंड) विरोधी लेख क्यों नहीं देते? (ताकि कोई दूसरा पुस्तैनी पाखंडी वहाँ विराजित हो और हमारे 'धार्मिक ठग–कंपनी' के नेटवर्क से जुड़ कर यजमानों की बुद्धि पर ताला लगाते रहे!?) यानि यजमानों–सीधे–सच्चे हिंदुओं को मूर्ख बना कर उसकी पाकेटमारी करता रहे?

मुझे भी लगता है कि संयोग या दुर्योग से सचमुंच ही मैं पौराणिक राक्षसों (पंडितों–पुरोहितों) के हिरण्यकश्यपी समाज में प्रहलाद बनकर बेमेल–सा ही टपक पड़ा हूँ। जो इन लोगों को न मुझे उगलते बन रहा है, न निगलते ही। मैं भी आत्माहुति की बलिवेदी पर पाखंडों से खेलने और लड़ने का खूब आनंद ले रहा हूँ। क्योंकि मेरे विरोधियों के पास सिर्फ स्वार्थ भरा पाखंड है, जबकि मेरे पास वेद का सत्यार्थ है, इसीलिए विजयप्रद–सत्य हमारे साथ है!

ऐसे में आर्यजगत् से हमें मिल रहे अभूतपूर्व–आत्मीय उत्साहवर्द्धन हेतु सभी पाठकों को कृतज्ञता पूर्वक शत–शत साधुवाद!

आर्य प्रहलाद गिरि
आसनसोल
9735132360

****

"हैदराबाद मुक्ति संग्राम का इतिहास" का दूसरा संस्करण जल्द ही पाठकों को उपलब्ध होगा

डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डेजी ने लगभग पांच साल के अथक परिश्रम से "हैदराबाद मुक्ति संग्राम का इतिहास" यह ग्रन्थ लिखा है। मुक्ति संग्राम और हैदराबाद के हिन्दुस्तान में शामिल होने की, स्वर्णजयन्ती सन् 1998 में महाराष्ट्र की सरकार ने बड़े धूमधाम से मनायी। डॉ. लोखण्डे ने भी उसी समय मन ही मन संकल्प किया कि "मैं जब तक मराठवाडा, तेलंगाना और कर्नाटक के सुदूर प्रदेशों में जाकर आर्य समाज द्वारा किये गये संघर्ष पूर्ण इतिहास को खोजकर शब्द बद्ध नहीं करता तब तक चैन से नहीं बैठूंगा। इसी भीष्म प्रतिज्ञा को साकार रुप देने के लिए उन्होंने तीनों प्रदेशों में जाकर उन स्वतन्त्रता सेनानियों से प्रत्यक्ष मिलकर कर तथा सैंकड़ों पुस्तकों तथा तत्कालीन समाचार पत्रों की कटिंग्स की पड़ताल कर एक परिपूर्ण इतिहास लिखा, वह है "हैदराबाद मुक्ति संग्राम का इतिहास"। इस 450 पृष्ठों के ग्रन्थ को लिखते समय उन्हें शारीरिक, आर्थिक और सेवान्तर्गत कठिनाइयाँ आयीं लेकिन उनको मात देकर उन्होंने यह इतिहास लिखकर पूर्ण किया। विशेष यह कि मराठी, तेलंगाना और कन्नड भाषी लेखकों ने अपने ग्रन्थों में आर्य समाज के संघर्ष और बलिदान की उपेक्षा की और आर्य लेखकों ने अन्य संस्था द्वारा किये गये संघर्ष की अनदेखी की। इस कारण किसी भी लेखक द्वारा परिपूर्ण इतिहास लिखा नहीं गया। लेकिन डॉ. चन्द्रशेखर लोखंडे ने हैदराबाद की आजादी में सभी के योगदान का उल्लेख किया है जिसे हम परिपूर्ण इतिहास कह सकते हैं। जैसे काँग्रेस, हिन्दू महासभा, वन्दे मातरम् आन्दोलन, वकीलों का आन्दोलन, किसानों का आन्दोलन तथा आर्यवीरों का बलिदान आदि। डॉ. लोखण्डे ने पूर्वाग्रह दूषित या एकांगी सोच रखकर यह इतिहास नहीं लिखा। गवेषकों शोधार्थियों एवं सामान्य पाठकों को यह ग्रन्थ अत्युपयोगी और परिपूर्ण होगा ऐसा मैं मानता हूँ। इसका पहला संस्करण समाप्त हो चुका था। श्री घूडमल प्रल्हाद कुमार आर्य धर्मार्थ ट्रस्ट के सुयोग्य प्रकाशक श्री, प्रभाकर देवजी ने इसे दूसरी बार प्रकाशित करने का निश्चय किया है। अतः जल्दी ही यह ग्रन्थ जिज्ञासु पाठकों के हाथों में होगा। महाराष्ट्र के एक मुस्लिम बुद्धिजीवी **सैय्यद अब्दुल हादी** इस ग्रन्थ के बारे में कहते हैं–"डॉ. चन्द्रशेखरजीने (हैदराबाद मुक्ति संग्राम का इतिहास) यह किताब लिखकर उत्तर हिन्दुस्तान के लोगों तक इस तवारिख (इतिहास) को पहुंचाने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। उन्होंने इस इतिहास को बड़े उमदा ढंग से लिखा है जिसे कई लोगों ने हिन्दू–मुसलमानों का संघर्ष कहकर बदनाम किया था, उनतक पहुंचाने की कोशिश की है जो कामयाब हुई है। उनके साथ एक नहीं कई मुस्लिम शख्स जुड़े हुए हैं। उन्हें एक बार जमाते इस्लामी–ए–हिन्द ने तकरीर के लिए बुलाया था जहाँ उन्होंने "वेद और कुरान" पर भाषण दिया था।

विशेष यह कि उनके इस ग्रन्थ का मराठी भाषा में भी प्रकाशन हुआ है जो संपूर्ण महाराष्ट्र में लोकप्रिय है। अतः इस ग्रन्थ के द्वितीय संस्करण के लिए उन्हें शुभ कामना। अधिक जानकारी हेतु लेखक से दूरध्वनि से सम्पर्क करें, 9922255597

दिनकरराव देशपांडे

****

आर्य केन्द्रीय सभा पानीपत ने मनाया आर्य समाज स्थापना दिवस

आर्य केन्द्रीय सभा के तत्वावधान में आर्य समाज स्थापना दिवस एवं रामनवमी महोत्सव को आर्य समाज मॉडल टाऊन में मनाया गया। गाजियाबाद से आमंत्रित मुख्य वेद प्रवक्ता आचार्य कमलजीत शास्त्री जी ने मर्यादापुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र जी तथा स्वामी दयानन्द जी के जीवन पर विस्तारपूर्वक चर्चा के दौरान कहा कि यदि हम श्री रामचन्द्र जी व योगीराज कृष्ण जी तथा स्वामी दयानन्द के नाम भारतीय संस्कृति से हटा दें तो हमारी संस्कृति शून्य हो जाएगी। स्वामी दयानन्द ने आर्य समाज की स्थापना विक्रमी संवत वाले दिन मुम्बई में की। स्वामी दयानन्द् जी ने कहा कि ये कोई नया मत नहीं है यह पुरातन वैदिक सनातन धर्म है यदि हम अपने जीवन का उत्थान चाहते हैं तो हमें वेद मार्ग पर चलना चाहिए। बाल–विवाह निषेध तथा विधवा विवाह का समर्थन करते हुए कहा कि हमें जात–पात से ऊपर उठकर गुण–कर्म–स्वभाव के आधार पर व्यक्ति की योग्यता को परखना चाहिए। आचार्य कमलजीत ने कहा कि आर्य समाज द्वारा ही महिला शिक्षा पर सबसे पहले जोर दिया गया जिसके कारण आज भारत की बेटियाँ अपने देश में ही नहीं अपितु विश्व में भारत का नाम रोशन कर रही हैं। यज्ञ को श्रेष्ठ कर्म बताते हुए प्रत्येक व्यक्ति को अपने परिवारजनों सहित यज्ञ करने का संदेश दिया। उन्होंने डी.ए.वी. जैसी संस्थाओं के शिक्षा क्षेत्र में श्रेष्ठतम योगदान की सराहना की।

भजनोपदेशक आचार्य श्री उपेन्द्र शर्मा जी शास्त्री ने देशभक्ति से भरे आर्य समाज के गीतों को प्रस्तुत कर उपस्थित आर्यजनों में जोश भर दिया। समारोह की अध्यक्षता श्री इन्द्रमोहन आहूजा जी ने की। मुख्यातिथि श्रीमती ललिता भाटिया एवं श्री रणजीत भाटिया जी रहे। ध्वजारोहण श्री ओ.पी. गोयल तथा श्री प्रेमसुधा गोयल जी के कर कमलों द्वारा सम्पन्न हुआ। विशिष्ठ अतिथि युवा समाजसेवी श्री सुरेश आहूजा एवं श्रीमती संगीता आहूजा जी ने मंच पर अपनी उपस्थिति दर्ज कराई।

रेवाड़ी में लगेगा सार्वदेशिक आर्य वीरांगना दल का शिविर

साध्वी डॉ. उत्तमायति प्रधान संचालिका से प्राप्त कए विज्ञाति के अनुसार सार्वदेशिक आर्य वीरांगना दल के तत्वावधान में वार्षिक शिविर 2017, भगवती आर्ष कन्या गुरुकुल महाविद्यालय रेवाड़ी में दिनाँक 28 मई 2017 से 4 जून 2017 तक लगाया जायेगा। शिविर में वीरांगनाओं को वैदिक सिद्धांतों का ज्ञान, व्यक्तित्व विकास एवं आत्मरक्षण प्रशिक्षण दिया जायेगा। मृदुला चौहान संचालिका 9810702760, आरती खुराना सचिव 9910234595 से सम्पर्क अधिक जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

आचार्य बलदेव जी महान् थे

आचार्य बलदेव जी महान् थे,
सदाचारी और इन्सान थे।।
स्वामी दयानन्द के सच्चे भक्त थे,
धर्मनिष्ठ वेदज्ञ और राष्ट्र–भक्त थे।।
वह वेदों के पुजारी थे,
ज्ञानी और ब्रह्मचारी थे।।
उन्होंने गौरक्षा आंदोलन चलाया।
समाज से भ्रष्टाचार मिटाया।।
ऋषि–मुनियों का मार्ग अपनाया,
विश्व में ओ३म् ध्वज फहराया।।
जग में ज्ञान की ज्योति जगाई,
सच्ची साधना मन की बतायी।।
वेदों के पथपर जो चलता,
वह सदा फूलों की तरह हंसता।।
जिसने आर्य समाज को अपनाया,
वेदों के पथपर चलना सिखाया।।

डॉ. रवीन्द्र कुमार शास्त्री "सोम"
फरीदाबाद (हरियाणा)

डी.ए.वी. सोनीपत में नये ब्लॉक के लिए हुआ भूमि पूजन

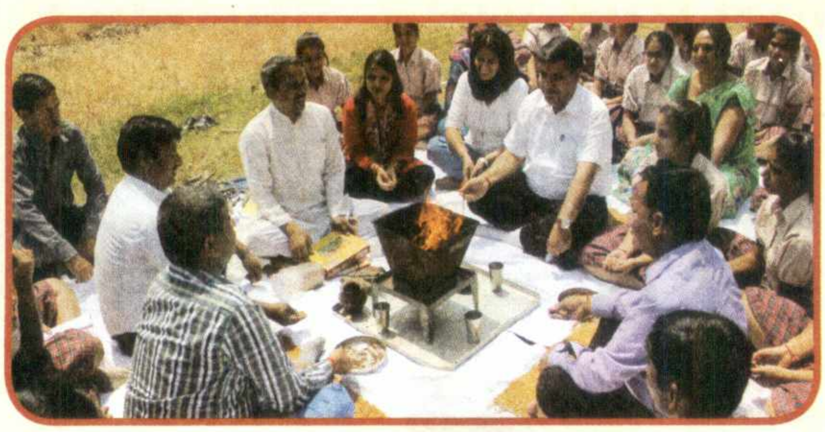

प्राचार्य श्री वी.के. मित्तल ने बताया कि शिक्षा के क्षेत्र में नित नई आधुनिकतम सुविधाओं को प्रदान करते हुए डी.ए.वी. स्कूल नगरवासियों को अपनी सेवाएँ देता आ रहा है इसी क्रम को आगे बढ़ाते हुए स्कूल परिसर में एक नये ब्लॉक का निर्माण यथावत भूमि–पूजन के साथ आरम्भ किया गया जिसके लिए सभी शिक्षकों और विद्यार्थियों ने धर्मशिक्षक श्री सुधांशु मित्र की देखरेख में यज्ञ मंत्रों के साथ उत्साहपूर्वक हवन कर भूमि–पूजन किया। इस नये भवन के नींव के पत्थर रखने का कार्य डी.ए.वी. प्रबन्धकर्त्री समिति नई दिल्ली के प्रधान पद्मश्री पूनम सूरी जी के कर कमलों के द्वारा किया गया था। प्राचार्य महोदय के अनुसार इस ब्लॉक में भूमिगत हॉल का निर्माण तथा लिफ्ट के निर्माण की विशेष योजना है। विद्यार्थियों व स्टॉफ ने यज्ञ कर उत्साह एवं अपनी खुशी का इज़हार किया।

☞ पृष्ठ 01 का शेष

एम. एल. खन्ना डी.ए.वी....

पुरोहित श्री भद्रकाम वर्णी जी थे। यज्ञ की सार्थकता बताते हुए श्री वर्णी जी ने कहा कि–वेद हमें पुरुषार्थ करने का सन्देश देता है। हम सभी को पुरुषार्थ चतुष्टय (धर्म–अर्थ–काम–मोक्ष) की प्राप्ति हेतु यज्ञ जैसे सत्कर्म करने में सदैव आगे रहना चाहिए। जीवन में केवल धर्मरत रहने से, केवल अर्थ की प्राप्ति कर लेने या केवल कामनाओं की पूर्ति कर लेने से मनुष्य जीवन सफल नहीं होता अपितु मोक्ष प्राप्त करना भी मनुष्यों के लिए एक आवश्यक अंग माना गया है। यह कार्यक्रम वैदिक रीति द्वारा विधिवत् रूप से संपन्न कराया गया। विद्यालय प्राचार्या श्रीमती मोनिका मेहन जी ने यज्ञ को योग के साथ जोड़ते हुए यज्ञ की सार्थकता समझाई और कहा कि–विद्यार्थी जीवन में योग एवं क्षेम दोनों की बहुत आवश्यकता होती है। आज के समय में ज्ञान विज्ञान के आविष्कार पर और विद्यार्थियों के संस्कारों के परिष्कार पर विशेष ध्यान देने पर बल दिया। 11 कुण्डीय यज्ञ की मुख्य यजमान विद्यालय प्राचार्या श्रीमती मोनिका मेहन जी थी।

कार्यक्रम के अन्त में यज्ञ में पधारे सभी छात्रवृन्द को आशीर्वाद दिया गया और अभिभावक अतिथि महानुभावों का धन्यवाद किया। शान्तिपाठ करके सभी को प्रसाद वितरित किया गया। कार्यक्रम का सारा कार्यभार/देखरेख व्यवस्था आदि विद्यालय के आर्य युवा क्लब के वरिष्ठ छात्रों द्वारा की गई ।

Registration No. R.N.I. 39/57
Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11 \6066\2015-17
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103 \2015-17
Posted at N.D.P.S.O. ON 26/27-04-2017

डी.ए.वी. गिद्ड़बाहा (पंजाब) में वैदिक चेतना शिविर सम्पन्न

जगन्नाथ जैन डी.ए.वी.सी.सै. पब्लिक स्कूल, गिदड़बाहा में तीन दिवसीय वैदिक चेतना शिविर का शुभारंभ वैदिक मंत्रोच्चारण द्वारा पावन यज्ञ से हुआ। यज्ञ में स्थानीय समिति के चेयरमैन श्री रघुवीर सिंह जी, आर्य समाज के सदस्य श्री मदनलाल आर्य जी, श्री भोलाराम जी, आर्य समाज के प्रधान भागचन्द्र जी, विद्यालय के प्रधानाचार्य सुश्री मोनिका खन्ना जी, अध्यापकगण तथा विद्यार्थीगण सम्मिलित हुए। आर्यश्रेष्ठ महानुभावों ने यजमान श्री रघुवीर सिंह जी के साथ बड़ी श्रद्धा और भक्तिपूर्वक पावन यज्ञ में आहुतियाँ दीं। यज्ञ के उपरांत ध्यानयोग की क्रियाएं बताई गईं। श्री मदनलाल जी ने शुभाशीष देते हुए नैतिक ज्ञान, नैसर्गिक ज्ञान एवं भारतीय नवसम्वत् के बारे में जानकारी दी। इस दौरान चित्रकला प्रतियोगिता, भजन प्रतियोगिता, खेल प्रतियोगिताएं करवाई गईं।

समापन समारोह के दौरान विद्यालय की प्रधानाचार्या सुश्री मोनिका खन्ना जी ने अपने शुभ विचारों से विद्यार्थियों को लाभान्वित किया। प्रधानाचार्या जी ने विद्यार्थियों को संयम, बंधुत्व, सहनशीलता, सद्भावना और प्रेम की भावनाओं से ओत-प्रोत होकर माता-पिता की सेवा करने के लिए प्रेरित किया। कार्यक्रम के अंत में विजेताओं को पुरस्कार वितरण किए गए तथा ऋषि प्रसाद का वितरण किया गया। आर.डी. मैडम श्रीमती नीलम कामरा जी, मैनेजर श्रीमती सतवंत भुल्लर जी तथा चेयरमैन श्री रघुवीर सिंह जी के आशीर्वाद से वैदिक चेतना शिविर का समापन समारोह हर्षोल्लास से सम्पन्न हुआ।

डी.ए.वी. नंदिनी ने मनाया नवसंवत्सरोत्सव

भारतीय नववर्ष के पावन अवसर पर प्रतिवर्ष की तरह इस वर्ष भी डी.ए.वी. इस्पात पब्लिक स्कूल नंदिनी माइंस में स्थित विशाल हंसराज सभाभवन में नव सृष्टि-संवत् तथा आर्यसमाज स्थापना दिवस बड़े धूमधाम एवं हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। इस शुभ वेला में चारों वेदों से चुने गए विषेष मंत्रों द्वारा बृहद् यज्ञ का सर्वप्रथम आयोजन किया गया। यजमान दंपती की महत्वपूर्ण भूमिका प्राचार्य महोदय ने सपत्नीक निर्वाह कर यज्ञ को सफल बनाया।

प्राचार्य श्री राजशेखर ने आर्यसमाज स्थापना दिवस के उपलक्ष्य पर सभी को बधाईयाँ देते हुए दयानंद जी के अधूरे कार्य को पूरा करने तथा उनके पद चिन्हों पर चलने के लिए प्रेरित किया। विद्यालय में अध्ययनरत छात्र-छात्राओं के लिए आर्य युवा समाज का भी गठन किया। छात्र-छात्राओं के बीच कुछ वैदिक परंपराओं एवं गतिविधियों के क्रियान्वयन हेतु पद एवं गोपनीयता की शपथ दिलाई गई।

संस्कृत शिक्षक श्री कर्मवीर शास्त्री द्वारा बृहद् यज्ञ का अनुष्ठान कराया गया। इस समारोह में विद्यालय के छात्रों के साथ बड़ी संख्या में शिक्षक-शिक्षकाओं ने भी भाग लिया तथा प्रज्ज्वलित यज्ञाग्नि में अपनी आहुतियां प्रदान करते हुए समाज की खुशहाली एवं सुखशांति की कामना की। यज्ञ के पश्चात् विद्यालय की शिक्षिकाओं ने तथा विद्यार्थियों ने भजनों की प्रस्तुति दी तथा वातावरण को भक्तिमय और आनंदमय बनाया। अंत में शांति पाठ के बाद प्रसाद वितरण किया गया।

डी.ए.वी. कॉलेज फॉर विमेन अमृतसर में हुई संगोष्ठी

बी.के.डी.ए.वी. कॉलेज फॉर विमेन, अमृतसर के स्वर्ण जयन्ती वर्ष में 'इंटरप्रेटिंग जेंडर-अ साईकोऐनॅलिटिकल पॅरस्पेकटिव-विषय पर इण्डियन काउँसिल ऑफ सोशल साईंस रिसर्च' के सौजन्य से एक संगोष्ठी का आयोजन किया गया जिसके उद्घाटन सत्र में प्रो. (डॉ.) आर.के. महाजन, डीन, कॉलेज डिवेलपमेंट काउंसिल, जी.एन.डी.यू, अमृतसर मुख्यातिथि रहे। इनके साथ मुख्यवक्ता डॉ. गुरपाल सिंह, प्रो. इवनिंग स्टडीज पंजाबी विभाग, पंजाब यूनिवर्सिटी चण्डीगढ़ एवं प्रथम तकनीकी सत्र के अध्यक्ष, डॉ. दविंदर सिंह जोहल, असोशिएट प्रो. साईकोलॉजी विभाग जी.एन.डी.यू. अमृतसर पधारे।

डॉ. आर.के. महाजन ने कल्पना चावला एवं उच्च स्तर की महिला वैज्ञानिकों का उदाहरण देते हुए कहा कि जो लोग लड़का और लड़की में भेद मानते हुए उनकी भूमिकाएँ निर्धारित करते हैं, उन्हें अपनी मानसिकता बदलने की आवश्यकता है और समाज की सोच बदलने में शिक्षा तथा मीडिया अपना प्रभावपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

मुख्य वक्ता डॉ. गुरपाल सिंह ने कहा कि लिंग को व्याख्यायित करना बहुत महत्वपूर्ण एवं कठिन विषय है। उन्होंने लिंग को वार्तालाप, सोच-विचार एवं रिप्रेजेन्टिंग आधारों पर विस्तृत रूप में विश्लेषित किया।

संगोष्ठी के प्रथम तकनीकी सत्र में प्रो. (डॉ.) दविंदर सिंह, साइकोलॉजी विभाग, गुरु नानक देव विश्वविद्यालय, अमृतसर ने अपने अध्यक्षीय वक्तव्य में कहा कि एक वर्ष में पढ़ी जाने वाली विविध पुस्तकों का ज्ञान ऐसे एक सैमीनार के माध्यम से अर्जित हो जाता है। उन्होंने मीराबाई, झांसी की रानी, माई भागो, शकुन्तला देवी की उदाहरण प्रस्तुत करते हुए कहा कि माता-पिता को भी चाहिए कि वे अपने बेटी व बेटा में कोई भेद न करते हुए दोनों को प्रत्येक कार्य में आत्मनिर्भर बनाएँ।

समापन सत्र के मुख्यातिथि प्रो. (डॉ.) एन.एस. तुंग, डीन, अकादमिक एफेयरस, गुरु नानक देव विश्वविद्यालय अमृतसर रहे। डॉ. तुंग ने मनोवैज्ञानिक दृष्टि से जेंडर आइडिन्टिटि पर विस्तारपूर्वक प्रकाश डाला और बताया कि परिस्थिति संस्कृति एवं मानसिकता के आधार पर जेंडर की पहचान परिवर्तित होती है।

प्राचार्या डॉ. पुष्पिंदर वालिया ने आए हुए अतिथियों का विधिवत् स्वागत किया।

श्री सुदर्शन कपूर अध्यक्ष, स्थानीय प्रबंधकर्त्री समिति, ने धन्यवाद ज्ञापित किया।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.**, डब्ल्यू-30, ओखला, फेस-II, नई दिल्ली-110020 (दूरभाष : 26388830-32) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.-9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक - **पूनम सूरी**